एएफआर

06.12.2018 को सुरक्षित

26.02.2019 को निर्गत

मुख्य न्यायमूर्ति का न्यायालय

वाद :- जनहित याचिका (पीआईएल) संख्या - 4717/2018 एवं 3 अन्य सम्बद्ध वाद

याचिकाकर्ता:- इलाहाबाद हेरिटेज सोसाइटी और 12 अन्य

प्रतिवादी:- उत्तर प्रदेश राज्य और 4 अन्य

याचिकाकर्ता के वकील:- सैयद फरमान अहमद नकवी, देबा सिद्दीकी, कमाल कृष्णा रॉय, शाहिद अली सिद्दीकी, सैयद अहमद फैजान, सैयद मोहम्मद जाफर हुसैन, श्री रवि किरण जैन (वरिष्ठ अधिवक्ता), श्री उमेश नारायण शर्मा (वरिष्ठ अधिवक्ता), विजय चंद्र श्रीवास्तव

प्रतिवादी के वकील:- सी.एस.सी.

माननीय मुख्य न्यायमूर्ति गोविंद माथुर

माननीय न्यायमूर्ति डॉ. योगेंद्र कुमार श्रीवास्तव

(माननीय न्यायमूर्ति डॉ. योगेंद्र कुमार श्रीवास्तव द्वारा निर्गत)

1. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री शशि नंदन, जिनकी सहायता श्री एसएफए नकवी, श्री उदयन नंदन और श्री अंशुल निगम ने की तथा राज्य के विद्वान अतिरिक्त महाधिवक्ता श्री मनीष गोयल, जिनकी सहायता श्री ए.के. गोयल ने की, को सुना।

2. वर्तमान जनहित याचिका अर्थात जनहित याचिका संख्या 4717/2018 और इससे जुड़े मामले (जनहित याचिका संख्या 4888/2018 और जनहित याचिका संख्या 4911/2018) मुख्य रूप से राज्य सरकार द्वारा उत्तर प्रदेश राजस्व संहिता, 2006 (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 8/2012)

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

की धारा 6 की उपधारा (2) के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए जारी अधिसूचना संख्या 1574/1-5-2018-72/2017-रेव-5 दिनांक 18.10.2018 को चुनौती देने के लिए दायर की गई है, जिसके तहत मौजूदा जिले "इलाहाबाद" का नाम बदलकर "प्रयागराज" जिला कर दिया गया है, और अन्य सहायक राहतों के लिए भी।

3. जनहित याचिका संख्या 4916/2018 में याचिकाकर्ताओं ने नगर निगम इलाहाबाद द्वारा पारित दिनांक 18.08.2018 के संकल्प को चुनौती देने की मांग की है, जिसके तहत इलाहाबाद का नाम बदलकर प्रयागराज करने के लिए राज्य सरकार को प्रस्ताव भेजने का संकल्प लिया गया था।

4. जनहित याचिकाओं में जिला इलाहाबाद का नाम बदलकर जिला प्रयागराज करने के निर्णय के संबंध में कैबिनेट नोट कहे जाने वाले दस्तावेज का संदर्भ दिया गया है, जो इस प्रकार है:-

"जनपद इलाहाबाद का नाम परिवर्तित कर जनपद 'प्रयागराज' किए जाने का निर्णय

आयुक्त एवं सचिव, राजस्व परिषद, उ० प्र० के पत्र दिनांक 15.10.2018 में अवगत कराया गया है कि इलाहाबाद की जनता एक लम्बे समय से इलाहाबाद के स्थान पर जनपद एवं नगर का नाम "प्रयाग" या "प्रयागराज करने की मांग निरन्तर कर रही है।

उनकी इस मांग के औचित्य निर्धारण के कम में राजस्व परिषद द्वारा उल्लेख किया गया है कि प्राचीन ग्रन्थों में हमारे देश में कुल 14 प्रयाग स्थल वर्णित हैं. इनमें प्रयाग (इलाहाबाद) के अतिरिक्त किसी अन्य स्थल का नाम परिवर्तित नहीं हुआ है, जबकि इस नगर को सभी प्रयागों का राजा अर्थात प्रयागराज कहा जाता है। जनपद एवं नगर का नाम प्रयाग से इलाहाबाद परिवर्तित होने के कारण राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक भ्रम की स्थिति

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

हमेशा उत्पन्न रही है, जिसके निवारण के लिए सम्पूर्ण संस्कृतियों का प्रतिनिधित्व करने करने वाले 'प्रयाग" का नाम इसे "प्रयाग अथवा प्रयागराज" के रूप में वापस मिलना तर्कपूर्ण न्यायसंगत प्रतीत होता है।

जनपद इलाहाबाद एवं नगर इलाहाबाद का नाम 'प्रयागराज किये जाने से जहां एक ओर राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सार पर भारतीय संस्कृति के प्रचार-प्रसार को बल मिलेगा तथा धार्मिक पर्यटन को बढ़ावा मिलेगा, वहीं दूसरी ओर इसकी वैदिक एवं पौराणिक पहचान भी अक्षुण्ण रह सकेगी।

उक्त के दृष्टिगत राजस्व परिषद द्वारा उपलब्ध करायी गयी संस्तुति के आधार पर जनपद इलाहाबाद का नाम परिवर्तित कर जनपद "प्रयागराज किया जाना प्रस्तावित है। उक्त के संबंध में वित्त एवं न्याय विभाग द्वारा अनापत्ति व्यक्त की गयी है।

5. राज्य सरकार द्वारा जारी दिनांक 18.10.2018 की अधिसूचना जिसके द्वारा संहिता, 2006 की धारा 6 की उपधारा (2) के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए इलाहाबाद जिले का नाम बदलकर प्रयागराज जिला कर दिया गया है, भी अभिलेख में है, तथा उसे नीचे पुन: प्रस्तुत किया जा रहा है:

Translated Version. Not for Legal Use.

"अधिसूचना

सं.1574/1-5-2018-72/2017-Rev-5

लखनऊ, दिनांक 18 अक्टूबर, 2018

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

उत्तर प्रदेश राजस्व संहिता, 2006 (यू.पी. अधिनियम संख्या 8, 2012) की धारा 6 की उपधारा (2) के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए राज्यपाल वर्तमान इलाहाबाद जिले का नाम परिवर्तित कर प्रयागराज जिला करने की कृपा करते हैं।

2- राज्यपाल यह भी निर्देश देने की कृपा करते हैं कि इस अधिसूचना की कोई भी बात किसी न्यायालय में पहले से प्रारंभ या लंबित किसी भी कानूनी कार्यवाही को प्रभावित नहीं करेगी।

आदेशानुसार,

(सुरेश चंद्र)

प्रमुख सचिव"

Translated Version. Not for Legal Use.

6. इसके अलावा, जिला मजिस्ट्रेट, प्रयागराज द्वारा जारी दिनांक 20.10.2018 का परिणामी कार्यालय ज्ञापन भी रिकॉर्ड में रखा गया है और यह इस प्रकार है:-

"कार्यालय जिलाधिकारी, प्रयागराज

पत्र क्रमांक 1000/THSTO/अधिसूचना-प्रयागराज/2018-19 दिनांक 20 अक्टूबर 2018

कार्यालय-ज्ञाप

उ०प्र० शासन के राजस्व अनुभाग-5 अधिसूचना 1574/1-5-2018-72/2017 दिनांक 18.10.2018 द्वारा सूचित किया गया है कि मा० राज्यपाल महोदय द्वारा उ० प्र० राजस्व संहिता, 2006 (उत्तर प्रदेश अधिनियम सं०-४ सन् 2012) की धारा 6 की उपधारा 2 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करके विद्यमान जिला इलाहाबाद का नाम जिला प्रयागराज के रूप में परिवर्तित कर दिया गया है। साथ ही यह भी निदेशित किया गया है कि अधिसूचना की किसी

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

बात का प्रभाव किसी विधि न्यायालय में पहले से प्रारम्भ की गयी या विचाराधीन किसी विधिक कार्यवाही पर नहीं पड़ेगा।

उक्त के कम में विद्यमान जिला इलाहाबाद के समस्त कार्यालयों के सभी कियाकलापों में जिला इलाहाबाद के स्थान पर जिला प्रयागराज प्रयोग किये जाने के निर्देश निर्गत किये जाते हैं। यह आदेश तत्काल प्रभाव से लागू होगा।

(सुहास एल. वाई)

जिलाधिकारी,

प्रयागराज"

7. पक्षों के प्रतिद्वंद्वी तर्कों की सराहना करने से पहले, वर्तमान मामले में शामिल विवाद के विषय पर प्रासंगिक वैधानिक प्रावधानों का संदर्भ लेना उचित होगा।

8. संहिता, 2006 (यूपी अधिनियम संख्या 8, 2012) को यूपी राज्य में भूमि काश्तकारी और भू-राजस्व से संबंधित कानून को समेकित और संशोधित करने तथा उससे संबंधित और उसके आनुषंगिक मामलों का प्रावधान करने के लिए अधिनियमित किया गया था। संहिता, 2006 का अध्याय II राजस्व प्रभागों से संबंधित है और धारा 5 राज्य को राजस्व क्षेत्रों में विभाजित करने का प्रावधान करती है, जिसमें प्रभाग शामिल हैं, जिनमें दो या अधिक जिले हो सकते हैं और प्रत्येक जिले में दो या अधिक तहसील हो सकती हैं और प्रत्येक तहसील में एक या अधिक परगना हो सकते हैं और प्रत्येक परगना में दो या अधिक गांव हो सकते हैं। धारा 6 राजस्व क्षेत्रों के गठन का प्रावधान करती है और उसके अनुसार राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा निर्दिष्ट कर सकती है: (i) जिले जो एक प्रभाग का गठन करते हैं; (ii) तहसील जो एक जिला का गठन करते हैं; और (iii) गांव जो एक तहसील का गठन करते हैं। धारा 6 की उपधारा (2) में यह प्रावधान है कि राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा उपधारा (1) में निर्दिष्ट किसी राजस्व क्षेत्र की सीमाओं को समामेलन, पुनः समायोजन, विभाजन या किसी भी तरीके से परिवर्तित कर सकती है या किसी ऐसे राजस्व क्षेत्र को समाप्त कर सकती है और किसी ऐसे राजस्व क्षेत्र का नाम

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

Translated Version. Not for Legal Use.

बदल सकती है। उपधारा (2) के परंतुक के अनुसार किसी राजस्व क्षेत्र की सीमाओं को बदलने के किसी प्रस्ताव पर इस उपधारा के तहत कोई आदेश पारित करने से पहले राज्य सरकार को आपत्तियां आमंत्रित करने के लिए ऐसे प्रस्तावों को निर्धारित तरीके से प्रकाशित करने का निर्देश दिया गया है और ऐसे प्रस्तावों पर किसी भी आपत्ति पर विचार करने की अपेक्षा की जाती है।

9. संदर्भ की सुविधा के लिए, संहिता, 2006 की धारा 5 और 6 को नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

> **"5. राज्य का राजस्व क्षेत्रों में विभाजन।** - इस संहिता के प्रयोजनों के लिए, राज्य को राजस्व क्षेत्रों में विभाजित किया जाएगा, जिसमें दो या अधिक जिले शामिल हो सकते हैं, और प्रत्येक जिले में दो या अधिक तहसील हो सकती हैं, और प्रत्येक तहसील में एक या अधिक परगना हो सकते हैं, और प्रत्येक परगना में दो या अधिक गांव हो सकते हैं।
>
> **6. राजस्व क्षेत्रों का गठन.**- (1) राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट कर सकेगी-
>
> (i) वे जिले जो एक संभाग का गठन करते हैं;
>
> (ii) वे तहसील जो एक जिला का गठन करते हैं;
>
> (iii) वे गांव जो एक तहसील का गठन करते हैं।
>
> (2) राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा, उपधारा (1) में निर्दिष्ट किसी राजस्व क्षेत्र की सीमाओं को समामेलन, पुनः समायोजन, विभाजन या किसी अन्य तरीके से परिवर्तित कर सकती है या किसी ऐसे राजस्व क्षेत्र को समाप्त कर सकती है और किसी ऐसे राजस्व क्षेत्र का नामकरण और नाम परिवर्तित कर सकती है और किसी भी मामले में जहां किसी क्षेत्र का नाम बदला जाता है, वहां किसी भी कानून या उपकरण या अन्य दस्तावेज में उसके मूल नाम के तहत क्षेत्र के सभी संदर्भ, नामांकित क्षेत्रों के संदर्भ माने जाएंगे, जब तक कि अन्यथा स्पष्ट रूप से प्रावधान न किया गया हो:

Translated Version: Not for Legal Use

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

बशर्ते कि किसी राजस्व क्षेत्र की सीमाओं को बदलने के किसी प्रस्ताव पर इस उपधारा के तहत कोई आदेश पारित करने से पहले, राज्य सरकार आपत्तियों को आमंत्रित करने के लिए ऐसे प्रस्तावों को निर्धारित तरीके से प्रकाशित करेगी और ऐसे प्रस्तावों पर किसी भी आपत्ति पर विचार करेगी।

(3) कलेक्टर निर्धारित तरीके से प्रकाशित आदेश द्वारा तहसील के गांवों को लेखपाल सर्किलों में तथा लेखपाल सर्किलों को राजस्व निरीक्षक सर्किलों में व्यवस्थित कर सकेगा तथा सर्किल के भीतर प्रत्येक राजस्व निरीक्षक का मुख्यालय भी निर्दिष्ट कर सकेगा।

(4) इस संहिता के प्रारंभ में विद्यमान संभाग, जिले, तहसील, परगना, राजस्व निरीक्षक सर्किल, लेखपाल सर्किल और गांव, जब तक कि पूर्ववर्ती उपधाराओं के अंतर्गत उनमें परिवर्तन न कर दिया जाए, इस धारा के अंतर्गत निर्दिष्ट राजस्व क्षेत्र माने जाएंगे।

10. संहिता, 2006 ने अपनी धारा 230 के अनुसार सामान्य अनुप्रयोग के कुछ अधिनियमों को निरस्त कर दिया है, और विशेष रूप से संयुक्त प्रांत भूमि राजस्व अधिनियम, 1901 को। उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम, 19012 (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 3, 1901) को उत्तर प्रदेश में भूमि राजस्व और राजस्व अधिकारियों के अधिकार क्षेत्र से संबंधित कानून को समेकित और संशोधित करने के लिए अधिनियमित किया गया था। अधिनियम, 1901 की धारा 11 डिवीजनों, जिलों, तहसीलों और उप-डिवीजनों को बनाने, बदलने और समाप्त करने की शक्ति के संबंध में थी, और संदर्भ की आसानी के लिए इसे नीचे उद्धृत किया जा रहा है:

"11. संभागों, जिलों, तहसीलों और उप-संभागों को बनाने, बदलने और समाप्त करने की शक्ति। - (1) राज्य सरकार नए संभागों या जिलों को बना सकती है या मौजूदा संभागों या जिलों को समाप्त कर सकती है।

(2) राज्य सरकार किसी संभाग, जिले या तहसील की सीमाओं को बदल सकती है और नई तहसील बना सकती है या मौजूदा तहसील को समाप्त कर सकती है और किसी

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

जिले को उप-संभागों में विभाजित कर सकती है और उप-संभागों की सीमाओं को बदल सकती है।

(3) उपधारा (2) के अधीन राज्य सरकार के आदेशों के अधीन रहते हुए, सभी तहसीलें जिलों के उप-विभाग मानी जाएंगी।"

11. संहिता, 2006 की धारा 233 राज्य सरकार को संहिता के प्रयोजनों को पूरा करने के लिए नियम बनाने का अधिकार देती है और इसके अनुसार उत्तर प्रदेश राजस्व संहिता नियम, 20163 अधिसूचित किए गए और ये 10.02.2016 से लागू हो गए। नियम, 2016 का अध्याय II राजस्व प्रभागों की विषय-वस्तु से संबंधित है। नियम 3 के अनुसार धारा 6(2) के अंतर्गत किसी राजस्व क्षेत्र की सीमाओं में परिवर्तन करने का प्रत्येक प्रस्ताव, जिसमें किसी नए क्षेत्र का उन्मूलन या निर्माण भी शामिल है, प्रशासनिक दक्षता और जनहित पर आधारित होना आवश्यक है। नियम 4 में प्रावधान है कि ऐसे किसी क्षेत्र की सीमाओं में परिवर्तन करने का प्रत्येक प्रस्ताव आरसी फॉर्म I में प्रकाशित किया जाएगा। नियम 5 के अनुसार उक्त सूचना सरकारी राजपत्र में प्रकाशित की जाएगी; ऐसे क्षेत्र के स्थानीय क्षेत्र में व्यापक प्रसार वाले दो दैनिक समाचार पत्रों में जिनमें से एक हिंदी भाषा में होगा; तथा राजस्व परिषद, उत्तर प्रदेश की वेबसाइट पर अपलोड किया जाएगा। त्वरित संदर्भ हेतु नियम 3, 4, 5 एवं 6 नीचे उद्धृत किए जा रहे हैं:-

"3. राजस्व क्षेत्र की सीमाओं में परिवर्तन [धारा 6(2)].–धारा 6(2) के अधीन किसी राजस्व क्षेत्र की सीमाओं में परिवर्तन करने का प्रत्येक प्रस्ताव, जिसमें किसी नए क्षेत्र का उन्मूलन या सृजन भी शामिल है, प्रशासनिक दक्षता और लोकहित पर आधारित होना चाहिए।

4. सार्वजनिक सूचना का प्रारूप [धारा 6(2)].–किसी ऐसे राजस्व क्षेत्र की सीमाओं में परिवर्तन करने का प्रत्येक प्रस्ताव आर.सी. प्रपत्र I में प्रकाशित किया जाएगा।

5. सूचना का प्रकाशन [धारा 6(2)].–उपर्युक्त सूचना प्रकाशित की जाएगी–

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

Translation Version. Not for Legal Use.

(क) ऐसे क्षेत्र के स्थानीय क्षेत्र में व्यापक प्रसार वाले दो दैनिक समाचार-पत्रों में, जिनमें से एक हिंदी भाषा में होगा; और

(ख) बोर्ड की वेबसाइट पर अपलोड की जाएगी।

6. समिति द्वारा आपत्ति पर विचार [धारा 6(2)].–(1) इस अध्याय के अंतर्गत प्राप्त आपत्तियों पर एक समिति द्वारा विचार किया जाएगा, जिसमें निम्नलिखित सदस्य होंगे–

(क) अध्यक्ष, राजस्व परिषद–अध्यक्ष

(ख) आयुक्त, लखनऊ मंडल–सदस्य

(ग) उस मंडल का आयुक्त जिसमें राजस्व क्षेत्र प्रभावित हो रहा है–सदस्य

(घ) सचिव, राजस्व परिषद–सदस्य-सचिव।

(2) समिति आपत्तियों, यदि कोई हो, पर विचार करने के पश्चात राजस्व बोर्ड को रिपोर्ट प्रस्तुत करेगी, जो समिति द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट तथा जनता की आपत्तियों, यदि कोई हो, पर विचार करने के पश्चात उचित निर्णय के लिए अपनी टिप्पणियों सहित रिपोर्ट राज्य सरकार को प्रस्तुत करेगी। राज्य सरकार बोर्ड द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर निर्णय लेगी।"

12. याचिकाकर्ताओं द्वारा चुनौती का मुख्य आधार यह है कि जिले का नाम बदलने संबंधी दिनांक 18.10.2018 की अधिसूचना संहिता, 2006 के तहत प्रदान की गई योजना के अनुरूप नहीं है और न ही उक्त निर्णय लेने के लिए प्रशासनिक दक्षता से संबंधित कोई कारण था और न ही इसे जनहित में कहा जा सकता है।

13. यह तर्क दिया गया है कि उक्त अधिसूचना संहिता, 2006 की धारा 6 के अंतर्गत निहित प्रावधानों और नियम, 2016 के अंतर्गत इस प्रयोजन के लिए निर्धारित प्रक्रिया का उल्लंघन है और विशेष रूप से नियम 3, 4 और 5 का पालन नहीं किया गया है।

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

14. यह तर्क दिया गया है कि उपधारा (2) के परन्तुक के मद्देनजर, उक्त उपधारा के अधीन कोई भी आदेश पारित करने से पूर्व, राज्य सरकार को आपत्तियां आमंत्रित करने के लिए ऐसे प्रस्ताव को निर्धारित तरीके से प्रकाशित करना अपेक्षित था तथा ऐसे प्रस्ताव पर किसी भी आपत्ति पर विचार करना अपेक्षित था। इसके अलावा, नियम 3, 4 और 5 का हवाला देते हुए यह तर्क दिया गया है कि धारा 6(2) के तहत प्रस्ताव प्रशासनिक दक्षता और जनहित पर आधारित होना चाहिए था और इसे निर्धारित आरसी फॉर्म 1 में प्रकाशित किया जाना चाहिए था और इसकी सूचना सरकारी राजपत्र और व्यापक प्रसार वाले दो दैनिक समाचार पत्रों में प्रकाशित की जानी चाहिए थी और इसे राजस्व बोर्ड की वेबसाइट पर भी अपलोड किया जाना चाहिए था और प्राप्त आपत्तियों पर नियम 6(1) के तहत गठित समिति द्वारा विचार किया जाना चाहिए था और उसके बाद ही समिति द्वारा अपनी टिप्पणियों के साथ प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर राज्य सरकार कोई निर्णय ले सकती थी।

15. राज्य सरकार द्वारा वर्ष 1986 में प्रकाशित इलाहाबाद से संबंधित **उत्तर प्रदेश जिला गजेटियर** के कुछ अंशों पर भरोसा करते हुए, यह दावा किया गया है कि नाम परिवर्तन का प्रस्ताव प्रस्तुत करते समय जिला गजेटियर में दर्शाई गई इलाहाबाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को नजरअंदाज कर दिया गया है।

16. संविधान में मौलिक कर्तव्यों के विषय पर भाग IV-ए के तहत अनुच्छेद 51-ए पर भरोसा करते हुए, और विशेष रूप से, इसके खंड (ई) और खंड (एफ) जिसके तहत भारत के प्रत्येक नागरिक को धार्मिक, भाषाई और क्षेत्रीय या सांप्रदायिक विविधताओं से परे भारत के सभी लोगों के बीच सद्भाव और सामान्य भाईचारे की भावना को बढ़ावा देने का कर्तव्य है, और हमारी समग्र संस्कृति की समृद्ध विरासत को महत्व देने और संरक्षित करने का कर्तव्य है, याचिकाकर्ताओं ने यह तर्क देने की मांग की है कि चुनौती के तहत अधिसूचना हमारे संविधान के धर्मनिरपेक्ष लोकाचार के विपरीत है, और हमारी समग्र संस्कृति की भावना के विपरीत है।

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

17. याचिकाकर्ताओं ने जिलों और तालुकाओं/तहसीलों के नाम में परिवर्तन के विषय पर भारत सरकार के गृह मंत्रालय द्वारा जारी दिनांक 27.05.1981 के एक पत्र की ओर भी ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया है, जिसमें मंत्रालय के दिनांक 11.09.1953 के पत्र का संदर्भ देते हुए कहा गया था कि जिलों/तालुकाओं/तहसीलों के नाम में प्रस्तावित परिवर्तन के मामले में वही प्रक्रिया अपनाई जाए जो गांवों, कस्बों, रेलवे स्टेशनों आदि के नाम में परिवर्तन करने के लिए अपनाई जा रही है, अर्थात ऐसे सभी प्रस्तावों को किसी भी परिवर्तन किए जाने या घोषणा किए जाने से पहले पूर्व सहमति के लिए भारत सरकार (गृह मंत्रालय) को भेजा जाना चाहिए और ऐसा कोई भी प्रस्ताव भेजने से पहले दिनांक 11.09.1953 के पत्र में दिए गए निर्देशों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

18. यह तर्क दिया गया है कि विवादित अधिसूचना केंद्र सरकार द्वारा दिनांक 27.05.1981 और 11.09.1953 के संचारों द्वारा जारी किए गए विशिष्ट निर्देशों के विपरीत है। इसके अलावा, यह तर्क दिया गया है कि पूरी कार्रवाई अत्यधिक और अनुचित जल्दबाजी में की गई है और अप्रासंगिक और बाहरी विचारों पर आधारित है। राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 19564 और यूपी पुनर्गठन अधिनियम, 20005 का हवाला देते हुए तर्क दिया गया है कि उपर्युक्त अधिनियमों के अनुसार, राज्य सरकार को जिलों/मंडलों का नाम बदलने का अधिकार नहीं है।

19. इसके विपरीत, श्री मनीष गोयल, विद्वान अपर महाधिवक्ता ने दिनांक 18.10.2018 की अधिसूचना जारी करने में राज्य सरकार की कार्रवाई का समर्थन करते हुए कहा है कि राज्य सरकार संहिता, 2006 की धारा 6 के तहत किसी भी राजस्व क्षेत्र अर्थात् मंडल, जिला, तहसील, परगना या गांव का नाम रखने या बदलने के लिए पूरी तरह से सशक्त है और राज्य सरकार की कार्रवाई में कोई अवैधानिकता नहीं है। विद्वान अपर महाधिवक्ता ने अपने इस तर्क के समर्थन में प्रासंगिक अभिलेख भी प्रस्तुत किए कि जिले का नाम इलाहाबाद से प्रयागराज करने के लिए संहिता, 2006 की धारा 6 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करने से पहले राज्य सरकार द्वारा उचित रूप से विचार किया गया था।

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

20. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और हमारे समक्ष प्रस्तुत सामग्री का अवलोकन किया है।

21. संहिता, 2006 को उत्तर प्रदेश राज्य में भूमि काश्तकारों और भू-राजस्व से संबंधित कानून को समेकित और संशोधित करने तथा उससे संबंधित और उसके आनुषंगिक मामलों के लिए प्रावधान करने के लिए अधिनियमित किया गया था। अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के कथन में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि राजस्व संहिता का उद्देश्य उत्तर प्रदेश राज्य में भूमि काश्तकारों और भू-राजस्व से संबंधित राजस्व कानून से संबंधित विभिन्न अधिनियमों के प्रासंगिक प्रावधानों को संशोधन के साथ समेकित करना है। संहिता, 2006 के उद्देश्यों और कारणों का कथन इस प्रकार है:-

> प्रस्तावना नोट-उद्देश्यों एवं कारणों का कथन-वर्तमान में उत्तर प्रदेश राज्य में राजस्व कानून से संबंधित 39 अधिनियम लागू हैं। इन अधिनियमों में से उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम, 1950 तथा उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम, 1901 महत्वपूर्ण अधिनियम हैं। ब्रिटिश शासन काल में अनेक अधिनियम बनाए गए थे। उनमें से अधिकांश प्रावधान समाप्त हो चुके हैं। उन अधिनियमों के कुछ प्रावधान एक-दूसरे से असंगत हैं। राजस्व कानून से संबंधित विभिन्न अधिनियमों में अलग-अलग प्रावधानों के कारण राजस्व मुकदमों में काफी वृद्धि हुई है। परिणामस्वरूप राजस्व मामले बहुत लंबे समय तक निपटान के लिए लंबित रहते हैं। इन परिस्थितियों में इन सभी अधिनियमों के प्रासंगिक प्रावधानों में संशोधन करके उन्हें एक अधिनियम में समेकित करना आवश्यक हो गया है। अतः यह निर्णय लिया गया है कि राज्य में भूमि-पट्टे और भू-राजस्व से संबंधित कानूनों को समेकित और संशोधित किया जाए तथा उनसे संबंधित और आनुषंगिक मामलों का भी प्रावधान किया जाए। अतः उपर्युक्त आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उत्तर प्रदेश राजस्व संहिता विधेयक, 2006 तैयार किया गया है।

Translated Version: Not for Legal Use

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

22. संहिता, 2006 का अध्याय II राजस्व प्रभागों से संबंधित है, और धारा 5 राज्य को राजस्व क्षेत्रों में विभाजित करने का प्रावधान करती है, और इसके अनुसार राज्य को राजस्व क्षेत्रों में विभाजित किया जाना है, जिसमें प्रभाग शामिल हैं, जिनमें दो या अधिक जिले हो सकते हैं, प्रत्येक जिले में दो या अधिक तहसील हो सकती हैं, प्रत्येक तहसील में एक या अधिक परगना हो सकते हैं और प्रत्येक परगना में दो या अधिक गांव हो सकते हैं। इसके अलावा, धारा 6 राज्य सरकार को अधिसूचना द्वारा यह निर्दिष्ट करने का अधिकार देती है कि कौन से जिले प्रभाग का गठन करते हैं, कौन सी तहसीलें जिला का गठन करती हैं और कौन से गांव तहसील का गठन करते हैं। उप-धारा (2) में यह प्रावधान है कि राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा उप-धारा (1) में निर्दिष्ट किसी राजस्व क्षेत्र की सीमाओं को समामेलन, पुनर्समायोजन, विभाजन या किसी अन्य तरीके से बदल सकती है या ऐसे किसी राजस्व क्षेत्र को समाप्त कर सकती है। यह राज्य सरकार को किसी भी ऐसे राजस्व क्षेत्र का नामकरण करने और नाम बदलने का अधिकार भी देता है।

23. संहिता, 2006 की धारा 5 और 6 के अंतर्गत निहित प्रावधानों को संयुक्त रूप से पढ़ने से यह पता चलता है कि राज्य सरकार विभिन्न राजस्व क्षेत्रों को निर्दिष्ट करने के लिए पूरी तरह से सशक्त है, और वह अधिसूचना द्वारा राजस्व क्षेत्रों की सीमाओं में परिवर्तन कर सकती है, जिसमें किसी भी राजस्व क्षेत्र का नाम बदलना भी शामिल है।

24. संहिता, 2006 की धारा 5 के अंतर्गत "जिला" शब्द को राजस्व क्षेत्र के रूप में संदर्भित किया गया है, तथा इसके अनुसार दो या अधिक जिले मिलकर एक संभाग बना सकते हैं, तथा एक जिले में दो या अधिक तहसीलें हो सकती हैं, प्रत्येक तहसील में एक या अधिक परगना हो सकते हैं, प्रत्येक परगना में दो या अधिक गांव हो सकते हैं। अधिनियम, 1901 की धारा 11 (अब निरस्त) जिसके अनुसार राज्य सरकार को संभाग, जिले, तहसील और उप-संभाग बनाने, बदलने और समाप्त करने का अधिकार दिया गया था, में भी "जिला" को राजस्व संभाग माना गया था।

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

25. इस प्रकार "जिला" शब्द को संहिता, 2006 और अधिनियम, 1901 दोनों के तहत राजस्व क्षेत्र के रूप में संदर्भित किया गया है।

26. हम **ब्लैक लॉ डिक्शनरी (नौवां संस्करण)** में उल्लिखित "जिला" शब्द की परिभाषा का भी उल्लेख कर सकते हैं, जिसके तहत "जिला" शब्द को "एक प्रादेशिक क्षेत्र" के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसमें एक देश, राज्य, काउंटी, नगर पालिका या अन्य राजनीतिक उप-विभाग न्यायिक, राजनीतिक, चुनावी या प्रशासनिक उद्देश्यों के लिए विभाजित किया जाता है।

27. संविधान (सत्तरवाँ संशोधन) अधिनियम, 1992 और संविधान (चौहत्तरवाँ संशोधन) अधिनियम, 1992 द्वारा क्रमशः संविधान के **भाग IX** और **भाग IX-A** के अंतर्गत निहित इस संबंध में संवैधानिक प्रावधानों पर ध्यान देना भी प्रासंगिक हो सकता है। संविधान के अनुच्छेद 243 के अंतर्गत परिभाषा खंड इस प्रकार है:-

"243. परिभाषाएँ.- इस भाग में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो,-

(क) "जिला" से किसी राज्य का जिला अभिप्रेत है;

(ख) "ग्राम सभा" से किसी ग्राम स्तर पर पंचायत के क्षेत्र में समाविष्ट किसी ग्राम से संबंधित निर्वाचक नामावली में पंजीकृत व्यक्तियों से मिलकर बना निकाय अभिप्रेत है;

(ग) "मध्यवर्ती स्तर" से किसी राज्य के राज्यपाल द्वारा सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा इस भाग के प्रयोजनों के लिए मध्यवर्ती स्तर के रूप में निर्दिष्ट ग्राम और जिला स्तरों के बीच का स्तर अभिप्रेत है;

(घ) "पंचायत" से ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अनुच्छेद 243-ख के अधीन गठित स्वशासन की संस्था (चाहे किसी भी नाम से पुकारी जाए) अभिप्रेत है;

(ङ) "पंचायत क्षेत्र" से किसी पंचायत का प्रादेशिक क्षेत्र अभिप्रेत है;

(च) "जनसंख्या" से पिछली जनगणना में निर्धारित जनसंख्या अभिप्रेत है जिसके सुसंगत आंकड़े प्रकाशित हो चुके हैं;

Translated Version: Not for Legal Use

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

(छ) “ग्राम” से राज्यपाल द्वारा सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा इस भाग के प्रयोजनों के लिए ग्राम के रूप में निर्दिष्ट ग्राम अभिप्रेत है। और इसमें निर्दिष्ट गांवों का एक समूह शामिल है।"

28. हम भाग IX-A के अंतर्गत अनुच्छेद 243-P(b) का भी संदर्भ ले सकते हैं, जो इस प्रकार है:-

"243-P. परिभाषाएँ.- इस भाग में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो,-

x x x x x

(b) “जिला” का अर्थ किसी राज्य का जिला है;"

29. अनुच्छेद 243(ए) के तहत "जिला" शब्द की परिभाषा इस प्रकार की गई है, "जिला का अर्थ राज्य में एक जिला है"। अनुच्छेद 243(सी) "मध्यवर्ती स्तर" को गांव और जिला स्तरों के बीच के स्तर के रूप में परिभाषित करता है, जिसे राज्य के राज्यपाल द्वारा सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा इस भाग के प्रयोजनों के लिए मध्यवर्ती स्तर के रूप में निर्दिष्ट किया जाता है। इसके अलावा, अनुच्छेद 243(जी) के तहत, "गांव" को राज्यपाल द्वारा सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा इस भाग के प्रयोजनों के लिए गांव के रूप में निर्दिष्ट गांव के रूप में परिभाषित किया गया है और इसमें निर्दिष्ट गांवों का एक समूह शामिल है।

30. उपर्युक्त प्रावधान दर्शाते हैं कि भाग IX के अंतर्गत "मध्यवर्ती स्तर" और "गांव" के सृजन के लिए तथा भाग IX-A के अंतर्गत "महानगरीय क्षेत्र" और "नगरपालिका क्षेत्र" के सृजन के लिए राज्य के राज्यपाल द्वारा जारी की जाने वाली सार्वजनिक अधिसूचना आवश्यक है; तथापि, जिले के मामले में अनुच्छेद 243(a) और अनुच्छेद 243-P(b) दोनों ही "जिले" को राज्य में जिले के रूप में परिभाषित करते हैं।

31. संहिता, 2006 के लागू होने से पूर्व अधिनियम, 1901 की धारा 11 के अंतर्गत प्रभागों, जिलों, तहसीलों और उप-विभागों के सृजन, परिवर्तन और उन्मूलन की शक्ति प्रदान की गई थी,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

Translated Version. Not for Legal Use.

और इस प्रकार हम अधिनियम, 1901 की धारा 11 के अंतर्गत शक्तियों के दायरे के संबंध में निर्धारित कानून का लाभप्रद रूप से उल्लेख कर सकते हैं।

32. राज्य सरकार द्वारा अधिनियम, 1901 की धारा 11 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए एक नया जिला बनाने के लिए जारी की गई अधिसूचना को **राम मिलन शुक्ला एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य 6** के मामले में एक जनहित याचिका में चुनौती दी गई थी, जिसके तहत यह माना गया था कि यद्यपि एक नया जिला बनाना एक प्रशासनिक कार्य है, फिर भी ऐसी प्रशासनिक शक्तियों का प्रयोग सुसंगत विचारों पर किया जाना चाहिए न कि मनमाने ढंग से और मामले को नए सिरे से विचार के लिए वापस भेज दिया गया था, और उसके बाद दायर विशेष अनुमति याचिका को खारिज कर दिया गया था।

33. यह प्रश्न इस न्यायालय की अगली खंडपीठ के समक्ष **बृजेन्द्र कुमार गुप्ता एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य** के मामले में पुनः विचारार्थ आया, जिसमें राम मिलन शुक्ला (सुप्रा) के मामले में लिए गए निर्णय को अनुचित माना गया, क्योंकि इसमें **संविधान बहाली आंदोलन बनाम भारत संघ** के मामले में दिए गए खंडपीठ के पहले के निर्णय पर विचार नहीं किया गया था।

34. संविधान बहाली आंदोलन (सुप्रा) के मामले में, छह नए जिलों के निर्माण की अधिसूचनाओं को चुनौती देने की मांग की गई थी, साथ ही यह प्रार्थना भी की गई थी कि अधिनियम, 1901 की धारा 11 को अधिकारहीन घोषित किया जाए। चुनौती को खारिज करते हुए, रिट याचिका को निम्नलिखित टिप्पणियों के साथ खारिज कर दिया गया: -

> "7. यह ध्यान देने योग्य है कि राज्य सरकार को कुछ प्रभागों के आयुक्त नियुक्त करने और अधिनियम की धारा 12 के प्रावधानों के आधार पर जिले के कलेक्टर को नियुक्त करने का अधिकार है। आयुक्त और कलेक्टर को उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम और अन्य सभी अधिनियमों द्वारा प्रदत्त सभी शक्तियों का प्रयोग करने और सभी

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

कर्तव्यों का निर्वहन करने का अधिकार है, जिसका प्रयोग करने का अधिकार उन्हें उन अन्य अधिनियमों के तहत है।

8. मौजूदा स्पष्ट प्रावधान के मद्देनजर यह ज्ञात नहीं है कि किस आधार पर जिले के निर्माण को रोका जा सकता है। यह तर्क कि 'जिला' शब्द को अनुच्छेद 243 में परिभाषित किया गया है और इस संबंध में उक्त अनुच्छेद और अन्य अनुच्छेदों जैसे 254, 372 और 375 का संदर्भ पूरी तरह से गलत प्रतीत होता है। किसी राज्य का क्षेत्र संवैधानिक प्रावधान के तहत पहले से ही तय है। राज्य की आंतरिक व्यवस्था स्पष्ट रूप से एक ऐसा मामला है जिसका फैसला राज्य सरकार को करना है। इसलिए राजस्व जिले का निर्माण राज्य सरकार की विशेष शक्ति के अंतर्गत आता है। इसलिए इस संबंध में आगे दिए गए अन्य सभी तर्क खारिज किए जाते हैं।

9. यहां यह उल्लेख करना आवश्यक है कि श्री मृत्युंजय ने इस बात पर जोर दिया कि विपक्षी पार्टी नंबर 3 द्वारा मुख्यमंत्री का पद ग्रहण करने के लगभग दो या तीन महीने के भीतर इस नए जिले के निर्माण की न तो कोई आवश्यकता थी और न ही कोई औचित्य था। वह यह तर्क देना चाहते थे कि नए जिले के निर्माण के लिए कोई प्रस्ताव नहीं हो सकता है, नए जिले के लिए कोई बजट नहीं हो सकता है और ऐसा कोई तरीका नहीं हो सकता है जिसके द्वारा नव निर्मित जिले में तत्काल कानून और व्यवस्था की देखभाल की जा सके।

10. यह ध्यान देने योग्य है कि तीनों तर्क बिना किसी आधार के हैं। इनका उल्लेख केवल अस्वीकार करने के लिए किया गया है। यह ध्यान देने योग्य है कि जिला बनाने की सरकार की कार्रवाई स्पष्ट रूप से राज्य सरकार की संतुष्टि पर आधारित है। मुख्यमंत्री को राज्यपाल को सलाह देनी होती है जो राज्य सरकार की ओर से आवश्यक आदेश पारित करते हैं। इसलिए, उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 11 ऐसी कार्यकारी कार्रवाई की अनुमति देती है। राजनीतिक मकसद या आरोप जिस पर तर्क दिया जा रहा था, प्रशासनिक आवश्यकता के आधार पर जिले के निर्माण के संबंध में

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

विचार नहीं किया जा सकता और न ही किया जाना चाहिए। इसके अलावा कोई अन्य आधार नहीं बताया गया।"

11 ऐसी कार्यकारी कार्रवाई की अनुमति देती है। राजनीतिक उद्देश्य या आरोप जिस पर तर्क दिया जा रहा था, उसे प्रशासनिक आवश्यकता के आधार पर जिले के निर्माण के संबंध में नहीं माना जाना चाहिए। इसके अलावा कोई अन्य आधार नहीं बताया गया।

35. एक अन्य चुनौती अधिनियम, 1901 की धारा 11 के तहत जारी अधिसूचना को लेकर उठाई गई थी, जिसमें एक नए जिले के निर्माण का निर्देश दिया गया था, जिसका निपटारा उच्च न्यायालय ने राम मिलन शुक्ला (सुप्रा) के मामले में पारित आदेश के संदर्भ में किया था। यह मामला उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम चौधरी रणबीर सिंह एवं अन्य में सर्वोच्च न्यायालय में ले जाया गया और इस पर निम्न प्रकार से निर्णय दिया गया:-

"12. कैबिनेट का निर्णय लगभग आठ साल पहले लिया गया था और यह प्रभावी प्रतीत होता है। ऐसा होने पर पुनर्विचार करने का निर्देश देने की कोई गुंजाइश नहीं है जैसा कि राम मिलन के मामले में किया गया था, हालांकि प्रतिवादियों के विद्वान वकील ने प्रार्थना की कि ऐसा निर्देश दिया जाना चाहिए। जैसा कि राज्य के विद्वान वकील ने सही तर्क दिया है, नीतिगत निर्णयों के मामलों में हस्तक्षेप की गुंजाइश बेहद सीमित है। नीतिगत निर्णय सरकार पर छोड़ दिया जाना चाहिए क्योंकि वह अकेले ही यह तय कर सकती है कि विभिन्न कोणों से सभी प्रासंगिक पहलुओं पर विचार करने के बाद कौन सी नीति अपनाई जानी चाहिए। नीतिगत निर्णयों या सरकार द्वारा विवेकाधिकार के प्रयोग के मामले में जब तक मौलिक अधिकार का उल्लंघन नहीं दर्शाया जाता है, न्यायालयों को हस्तक्षेप करने का कोई अवसर नहीं मिलेगा और न्यायालय ऐसे मामलों में कार्यपालिका के निर्णय के स्थान पर अपना निर्णय नहीं लेगा और न ही उसे ऐसा करना चाहिए। सरकार के किसी निर्णय की औचित्य का आकलन करने में न्यायालय हस्तक्षेप नहीं कर सकता, भले ही सरकार के निर्णय से दूसरा दृष्टिकोण संभव हो।

Translated Version: Not for Legal Use

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

36. अधिनियम, 1901 की धारा 11 के तहत जिलों/मंडलों के निर्माण/उन्मूलन के संबंध में शक्तियों का दायरा **राजेश कुमार शर्मा एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य** में इस न्यायालय के समक्ष फिर से विचार के लिए आया, जिसके तहत यह माना गया कि उक्त धारा के तहत शक्ति विधायी प्रकृति की थी, और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत आकर्षित नहीं थे, और अधिनियम, 1901 की धारा 11 के तहत शक्ति के प्रयोग में जिलों और डिवीजनों के निर्माण/उन्मूलन का निर्णय लेते समय जिलों के निवासियों को अवसर प्रदान करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। "जिला" शब्द की अवधारणा पर निम्नलिखित शब्दों में विचार किया गया:-

> “41. जिला एक भौगोलिक क्षेत्र है जिसे सरकारी कर्तव्यों और कार्यों के निष्पादन के लिए एक प्रशासनिक इकाई के रूप में बनाया गया है। ब्लैक लॉ डिक्शनरी छठे संस्करण में 'जिला' को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित किया गया है "एक ऐसा प्रादेशिक क्षेत्र जिसमें एक संपूर्ण राज्य या देश, काउंटी, नगर पालिका या अन्य राजनीतिक उप-विभाजन न्यायिक, राजनीतिक, चुनावी या प्रशासनिक उद्देश्यों के लिए विभाजित किया जाता है"।
>
> 42. अधिनियम, 1901 के अधिनियमन से पहले 'जिला' की अवधारणा बहुत अधिक अस्तित्व में थी। अधिनियम की प्रस्तावना में स्पष्ट रूप से प्रावधान है कि यह अधिनियम उत्तर प्रदेश राज्य में 'भू-राजस्व' और 'अधिकारियों के राजस्व के अधिकार क्षेत्र' से संबंधित कानून को समेकित और संशोधित करने के लिए अधिनियमित किया गया है। अधिनियम की धारा 4 एक परिभाषा खंड है, जिसमें 'राजस्व न्यायालय' 'राजस्व अधिकारी' 'राजस्व मुक्त' और अन्य सभी परिभाषाओं की परिभाषा धारा 4 और उसकी उप-धाराओं में इंगित की गई है। धारा 4 (7) 'राजस्व' को परिभाषित करती है जिसका अर्थ है 'भू-राजस्व'। धारा 4 (8) 'राजस्व न्यायालय' को परिभाषित करती है। धारा 4 (9) 'राजस्व अधिकारी' को परिभाषित करती है। धारा 4 (10) 'राजस्व मुक्त' को परिभाषित करती है। अधिनियम की धारा 4 में अन्य परिभाषाएँ शामिल की गई हैं। हमने परिभाषा खंड सहित अधिनियम के संपूर्ण प्रावधानों का भी अवलोकन किया है, लेकिन हमें अधिनियम में 'जिला' को परिभाषित करने के लिए कोई संकेत नहीं मिला, सिवाय इसके

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

कि अधिनियम की धारा 11 में संभागों, जिलों, तहसीलों और उप-विभागों को बनाने, बदलने या समाप्त करने की शक्ति दी गई है। चूंकि हम इस मामले में अधिनियम की धारा 11 से संबंधित हैं, जिसके तहत नौ जिलों और चार संभागों को समाप्त करने के लिए अधिसूचनाएं जारी की गई थीं, इसलिए हम अधिनियम की धारा 11 का संदर्भ देना चाहते हैं, जिसे नीचे उद्धृत किया गया है:

"11. संभागों, जिलों, तहसीलों और उप-संभागों को बनाने, बदलने और समाप्त करने की शक्ति। - (1) (राज्य सरकार) नए संभागों या जिलों को बना सकती है या मौजूदा को समाप्त कर सकती है।

(2) (राज्य सरकार) किसी भी संभाग, जिले या तहसील की सीमाओं को बदल सकती है और नई तहसील बना सकती है या मौजूदा को समाप्त कर सकती है, और किसी भी जिले को उप-संभागों में विभाजित कर सकती है, और उप-संभागों की सीमाओं को बदल सकती है।

(3) उप-धारा (2) के तहत (राज्य सरकार) के आदेशों के अधीन, सभी तहसीलों को जिलों के उप-विभाग माना जाएगा।"

43. अधिनियम की धारा 11 को सरलता से पढ़ने पर हमें यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि नये जिले बनाना या मौजूदा 'डिवीजनों' या 'जिलों' को समाप्त करना राज्य सरकार का विशेष अधिकार है।

44. यह ध्यान में रखते हुए कि अधिनियम में 'जिला' को परिभाषित नहीं किया गया है, 'जिला' शब्द का प्रयोग विधानमंडल द्वारा अधिनियम की धारा 11 के अंतर्गत किया गया है।

x x x x x

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

54. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित उपरोक्त सिद्धांतों से, यह स्पष्ट है कि 'जिला' शब्द का निश्चित अर्थ है और संविधान में 73वें और 74वें संशोधन के समय विधानमंडल को जिले की अवधारणा अच्छी तरह से ज्ञात थी और उस समय विद्यमान जिले को भाग IX और भाग IX-A के प्रयोजनों के लिए अपनाया गया था। जैसा कि पहले ही माना जा चुका है कि न तो भाग IX और भाग IX-A भाग IX और भाग IX-A के प्रयोजनों के लिए जिले के निर्माण की परिकल्पना करते हैं और न ही भाग IX और भाग IX-A में जिले की अवधारणा विधानमंडल द्वारा समझे गए 'जिले' के सामान्य अर्थ से भिन्न थी। रिट याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री जैन के इस कथन को स्वीकार करना भी कठिन है कि संविधान जिले की मौजूदा अवधारणा से भिन्न अवधारणा बनाता है। संविधान के भाग IX-A की योजना से, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, यह स्पष्ट है कि नगर पालिका, यानी एक नगर पंचायत, एक नगर परिषद और एक नगर निगम अपने साथ नगरपालिका जिले की कोई अवधारणा नहीं रखते हैं। अनुच्छेद 243-P(c) "महानगरीय क्षेत्र" को परिभाषित करता है जिसका अर्थ है दस लाख या उससे अधिक की आबादी वाला क्षेत्र, जो एक या अधिक जिलों में समाहित है और जिसमें दो या अधिक नगर पालिकाएँ या पंचायतें या अन्य सन्निहित क्षेत्र शामिल हैं, जिन्हें राज्यपाल द्वारा सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा निर्दिष्ट किया गया है।

x x x x x

56. विभिन्न क़ानून जिनमें 'जिला' शब्द का प्रयोग किया गया है,आम बोलचाल में समझी जाने वाली 'जिला' की अवधारणा के अनुसार प्रयोग किया जाता है, अर्थात किसी राज्य में बनाया गया जिला। उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत अधिनियम, 1961 की धारा 2 (26) के प्रावधान स्पष्ट करते हैं कि 'जिला' का अर्थ उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम, 1901 के तहत राजस्व जिला है। उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत अधिनियम, 1961 की धारा 2 (26) इस प्रकार है:

Translated Version: Not for Legal Use

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

"2 (26) "डिवीजन", "जिला" और "तहसील" का वही अर्थ होगा जो संयुक्त प्रांत भूमि राजस्व अधिनियम, 1901 में है;"

57. हमारा यह दृष्टिकोण राज्य यू.पी. और अन्य में सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियों द्वारा पूरी तरह से समर्थित है। प्रधान संघ क्षेत्र समिति एवं अन्य, 1995 (2) एडब्ल्यूसी 1316 (एससी): 1995 सप (2) एससीसी 305, जिसमें संविधान के भाग IX के अनुच्छेद 243(ई) के प्रावधानों से निपटते हुए सुप्रीम कोर्ट ने पैराग्राफ 11 में निम्नलिखित टिप्पणियां कीं, जो इस प्रकार हैं:

"11, पंचायतों का गठन गांव, मध्यवर्ती और जिला स्तर पर किया जाना है और अनुच्छेद 243(ई) द्वारा परिभाषित "पंचायत क्षेत्र" का अर्थ है पंचायत का प्रादेशिक क्षेत्र चाहे वह गांव, मध्यवर्ती या जिला स्तर पर हो। आगे यह याद रखना आवश्यक है कि अनुच्छेद 243(सी) के अनुसार "मध्यवर्ती स्तर" राज्यपाल द्वारा निर्दिष्ट गांव और जिला स्तरों के बीच का स्तर है, जबकि अनुच्छेद 243(ए) के अनुसार 'जिला' का अर्थ राज्य में एक जिला है जिसकी सीमाओं को राज्य सरकार द्वारा बदला जा सकता है। जिला राज्यपाल द्वारा निर्दिष्ट किए जाने की आवश्यकता नहीं है, जबकि संविधान के उक्त भाग के प्रयोजनों के लिए ग्राम और मध्यवर्ती स्तरों को राज्यपाल द्वारा निर्दिष्ट किया जाना है।"

37. अधिनियम, 1901 की धारा 11 के तहत शक्तियों के दायरे की प्रकृति पर इस न्यायालय की पूर्ण पीठ के समक्ष **बृज किशोर वर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य** में पुनः विचार किया गया तथा इस न्यायालय ने अधिनियम, 1901 की धारा 11 के तहत निहित प्रावधानों तथा संविधान की अनुसूची-VII की सूची-II में प्रासंगिक प्रविष्टियों का संदर्भ लेने के पश्चात यह निष्कर्ष निकाला कि राज्य सरकार को राजस्व क्षेत्रों, जिलों की सीमाओं में परिवर्तन करने तथा नए क्षेत्र बनाने अथवा जिलों को समाप्त करने की शक्ति प्रदान की गई है। इस संबंध में निर्णय में की गई टिप्पणियां इस प्रकार हैं:-

Translated Version: Not for Legal Use

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

“41. संविधान के अनुच्छेद 372 के मद्देनजर, अधिनियम उत्तर प्रदेश राज्य में भूमि कानूनों को विनियमित करने के मामले से निपटना जारी रखता है। हालांकि, ए.ओ. 1950 द्वारा कुछ प्रावधानों को छोड़ दिया गया और प्रतिस्थापित किया गया और अधिनियम की धारा 11 में, 'राज्य सरकार' शब्द जोड़ा गया। अधिनियम की संशोधित धारा 11 द्वारा राज्य सरकार को किसी भी डिवीजन, जिले या तहसील की सीमाओं को बदलने और नई तहसील बनाने या मौजूदा तहसील को खत्म करने की शक्ति प्रदान की गई है। अधिनियम की धारा 11 को निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया गया है:-

"11. संभाग, जिले, तहसील और उप-संभाग बनाने, बदलने और समाप्त करने की शक्ति। - (1) राज्य सरकार नए संभाग या जिले बना सकती है या मौजूदा को समाप्त कर सकती है।

(2) 'राज्य सरकार' किसी संभाग, जिले या तहसील की सीमाओं में परिवर्तन कर सकती है, नई तहसील बना सकती है या मौजूदा तहसील को समाप्त कर सकती है, किसी जिले को उप-संभागों में विभाजित कर सकती है और उप-संभागों की सीमाओं में परिवर्तन कर सकती है।

(3) उप-धारा (2) के अधीन 'राज्य सरकार' के आदेशों के अधीन रहते हुए, सभी तहसीलों को जिलों का उप-विभाग माना जाएगा।"

42. अधिनियम की धारा 12 राज्य सरकार को प्रत्येक संभाग में संभागीय आयुक्त नियुक्त करने का अधिकार देती है, जो अधिनियम या किसी अन्य समय लागू कानून के तहत उसे प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करेगा तथा कर्तव्यों का निर्वहन करेगा। अधिनियम की धारा 14 के तहत, राज्य सरकार को प्रत्येक जिले में कलेक्टर नियुक्त करने की शक्ति प्रदान की गई है, जो अधिनियम या किसी अन्य समय लागू कानून के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करेगा तथा कर्तव्यों का निर्वहन करेगा।

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

उत्तर प्रदेश भू-राजस्व अधिनियम की धारा 221 में यह प्रावधान है कि अधिनियम के तहत शक्ति प्रदान करते समय राज्य सरकार किसी व्यक्ति को उसके नाम या अधिकारियों के वर्ग को सामान्यतः उसके आधिकारिक पद के आधार पर सशक्त कर सकती है, उत्तर प्रदेश भू-राजस्व अधिनियम की धारा 221 के अनुसार:-

"221. शक्तियों का प्रदान करना - इस अधिनियम के तहत शक्तियाँ प्रदान करते समय, राज्य सरकार व्यक्तियों को नाम से या अधिकारियों के वर्गों को, सामान्यतः उनके आधिकारिक पदनामों से सशक्त कर सकती है, तथा ऐसे किसी भी आदेश में परिवर्तन या उसे रद्द कर सकती है।"

अधिनियम की धारा 221 द्वारा प्रदत्त शक्ति, उत्तर प्रदेश सामान्य खण्ड अधिनियम 1904 की धारा 14 द्वारा प्रदत्त शक्ति के समान है।

43. भारतीय संविधान की अनुसूची-VII की सूची-II की प्रविष्टि 5, 18, 45, 46 और 47 राज्य सरकार को स्थानीय सरकार और स्थानीय प्राधिकरणों, ग्राम प्रशासन, भूमि और भूमि राजस्व के संबंध में कानून बनाने का अधिकार देती है, जिसमें राजस्व का आकलन और संग्रह, कृषि आय पर कर आदि शामिल हैं। सुविधा के लिए, उन्हें निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया जाता है:

"5. स्थानीय सरकार, अर्थात् स्थानीय स्वशासन या ग्राम प्रशासन के उद्देश्य से नगर निगमों, सुधार ट्रस्टों, जिला बोर्डों, खनन बंदोबस्त प्राधिकरणों और अन्य स्थानीय प्राधिकरणों का गठन और शक्तियाँ।

18. भूमि, अर्थात् भूमि में या भूमि पर अधिकार, भूमि का स्वामित्व जिसमें जमींदार और किरायेदार का संबंध और किराए का संग्रह शामिल है; कृषि भूमि का हस्तांतरण और हस्तांतरण; भूमि सुधार और कृषि ऋण; उपनिवेशीकरण।

45. भूमि राजस्व, जिसमें राजस्व का आकलन और संग्रह, भूमि अभिलेखों का रखरखाव, राजस्व उद्देश्यों और अभिलेखों के लिए सर्वेक्षण शामिल है अधिकारों का हनन, तथा राजस्व का अलगाव।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

46. कृषि आय पर कर।

47. कृषि भूमि के उत्तराधिकार के संबंध में कर्तव्य।

38. इस प्रश्न पर कि क्या धारा 11 के तहत शक्तियां विधायी या प्रशासनिक प्रकृति की हैं, निर्णय में की गई निम्नलिखित टिप्पणियों का संदर्भ देना उचित है: -

"58. संविधान के अनुच्छेद 154, 162, 166 और उत्तर प्रदेश भू-राजस्व अधिनियम की धारा 11 को मिलाकर पढ़ने से जिला बनाने के संबंध में विधायी प्रकृति का कोई निर्णय नहीं होता। राज्य विधानमंडल द्वारा अधिनियम की धारा 11 के तहत राज्य सरकार को कार्यकारी शक्ति प्रदान करना अपने आप में इस बात का संकेत है कि जिला बनाने के लिए राज्य सरकार द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्ति प्रशासनिक प्रकृति की होगी, जिसमें विधायी जाल हो सकते हैं। यह राज्य सरकार द्वारा प्रयोग की जाने वाली अवशिष्ट शक्ति है, जो 1992 के सरकारी आदेश के अनुसार है।

x x x x x

60. अधिनियम की धारा 11 के तहत किसी संभाग, जिले या तहसील की सीमाओं में परिवर्तन के संबंध में शक्ति राज्य सरकार को प्रदान की गई है, न कि राज्य विधानमंडल को। संविधान का अध्याय-III राज्य विधानमंडलों से संबंधित है। राज्य विधानमंडलों का गठन चुनावी निकाय के माध्यम से किया जाता है और संविधान द्वारा निर्धारित तरीके से अपने संवैधानिक दायित्वों का निर्वहन करता है।

61. अधिनियम की धारा 11 के तहत राज्य विधानमंडल द्वारा निर्णय की आवश्यकता नहीं है, लेकिन यह राज्य सरकार को शक्ति प्रदान करती है। यह अच्छी तरह से स्थापित कानून है कि राज्य की कार्यकारी शक्ति राज्य विधानमंडल की शक्ति के साथ सह-विस्तृत है। राज्य विधानमंडल की विधायी क्षमता के भीतर किसी भी मामले को विनियमित करने के लिए पूर्व विधायी प्राधिकार के बिना नियम बना सकता है, सिवाय इसके कि जहां कानून की आवश्यकता हो। यह भी सामान्य कानून है कि जहां वैधानिक नियम क्षेत्र को नियंत्रित करते हैं, कार्यकारी निर्देश लागू नहीं होंगे और वे वैधानिक

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

नियमों के प्रतिकूल नहीं हो सकते हैं, एआईआर 1971 एससी 2560: आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य बनाम लावु नरेंद्रनाथ और अन्य; एआईआर 1971 एससी 2045: मध्य प्रदेश राज्य बनाम जैन; एआईआर 2006 एससी 2138, के.पी. सुधाकरन बनाम केरल राज्य; एआईआर 2008 एससी 3: भारत संघ बनाम केंद्रीय निर्वाचन यांत्रिक इंजीनियरिंग समूह ए (सीधी भर्ती) संघ), एआईआर 2008 एससी 3।

x x x x x

63. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने 'राज्य सरकार' शब्द को परिभाषित किया है और माना है कि इसका अर्थ है वह प्राधिकरण या व्यक्ति जिसे प्रासंगिक तिथि पर राज्य में सरकार की कार्यकारी शक्ति का प्रयोग करने के लिए अधिकृत किया गया है और संविधान लागू होने के बाद इसका अर्थ है राज्य का राज्यपाल, एआईआर 1964 एससी 703: उत्तर प्रदेश राज्य बनाम मोहम्मद नईम, एआईआर 1964 एससी 703।

64. एआईआर 1984 एससी 684: आर.एस. नायक बनाम ए.आर. अंतुले में दर्ज मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि अभिव्यक्ति "सरकार" की व्याख्या किसी विशेष क़ानून में प्रयुक्त संदर्भ में की जानी चाहिए।

भारतीय दंड संहिता की धारा 21 की व्याख्या करते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि अभिव्यक्ति "राज्य" कार्यपालिका को दर्शाता है न कि विधानमंडल को। एआईआर 1963 एससी 1323: राजस्थान राज्य एवं अन्य बनाम श्रीपाल जैन में पहले दिए गए फैसले में भी यही विचार व्यक्त किया गया है।

65. (2006) 2 एससीसी 682: श्रीकांत बनाम वसंतराव में राज्य सरकार शब्द को परिभाषित करते हुए यह माना गया है कि यह राज्य सरकार के नियंत्रण में स्थानीय या अन्य प्राधिकरणों से भिन्न है। अधिनियम (सुप्रा) की धारा 11 राज्य सरकार को संदर्भित करती है, जिसका अर्थ है संविधान की धारा 166 के साथ धारा 11 के तहत शक्ति का प्रयोग करने वाली राज्य सरकार। किसी भी मामले में, यह संविधान के अध्याय-VII के तहत प्रदान की गई राज्य विधानमंडल को संदर्भित नहीं करता है।

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

66. उपरोक्त के मद्देनजर, अधिनियम की धारा 11 के तहत राज्य सरकार द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्ति वैधानिक होगी, लेकिन विधायी जाल वाली प्रकृति में प्रशासनिक होगी। अधिनियम की धारा 11 के तहत दिए गए प्रावधानों के अनुसरण में प्रदत्त शक्ति का प्रयोग संविधान के अनुच्छेद 166 के तहत अधिसूचित व्यापार के नियमों के अनुसार किया जाना है। सामान्य खंड अधिनियम की धारा 14 और अधिनियम की धारा 11 के तहत 1992 के सरकारी आदेश (सुप्रा) के निर्णय के मद्देनजर यह पूरी तरह से विधायी नहीं हो सकता है।

39. उपर्युक्त चर्चा से स्पष्ट है कि यह लगातार माना गया है कि राज्य सरकार को अधिनियम, 1901 की धारा 11 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए किसी भी संभाग, जिले या तहसील की सीमाओं को बदलने या कोई नई तहसील बनाने या मौजूदा तहसील को समाप्त करने या किसी जिले को उप-मंडलों में विभाजित करने और उप-मंडलों की सीमाओं को बदलने का पूर्ण अधिकार है।

40. संहिता, 2006 के अन्तर्गत, जिसे अधिनियम, 1901 के निरसन के साथ अधिनियमित किया गया है, धारा 6 की उपधारा (2) राज्य सरकार को किसी राजस्व क्षेत्र, संभाग, जिला, तहसील की सीमाओं को समामेलन, पुनर्समायोजन, संभाग या किसी अन्य तरीके से बदलने या ऐसे किसी राजस्व क्षेत्र को समाप्त करने तथा ऐसे किसी राजस्व क्षेत्र का नामकरण करने और नाम बदलने का अधिकार देती है, इस शर्त के साथ कि यदि किसी क्षेत्र का नाम बदला जाता है, तो किसी भी कानून या उपकरण या अन्य दस्तावेज में उसके मूल नाम के अंतर्गत क्षेत्र के सभी संदर्भ, नाम बदले गए क्षेत्रों के संदर्भ माने जाएंगे, जब तक कि अन्यथा स्पष्ट रूप से प्रावधान न किया गया हो।

41. जहां तक याचिकाकर्ताओं की ओर से उठाए गए तर्क का संबंध है कि धारा 6 की उपधारा (2) के परंतुक के मद्देनजर, उक्त उपधारा के तहत कोई भी आदेश पारित करने से पहले राज्य सरकार को आपत्तियां आमंत्रित करने के लिए निर्धारित तरीके से प्रस्ताव प्रकाशित करने की

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

आवश्यकता थी और उक्त प्रस्ताव पर किसी भी आपत्ति पर विचार करने की आवश्यकता थी, यह ध्यान दिया जा सकता है कि परंतुक के अनुसार प्रस्ताव प्रकाशित करने और आपत्तियां आमंत्रित करने की आवश्यकता केवल किसी राजस्व क्षेत्र की सीमाओं को बदलने के प्रस्ताव के संबंध में है, और किसी भी राजस्व क्षेत्र के नामकरण या नाम बदलने के प्रस्ताव के मामले में इसकी आवश्यकता नहीं है।

42. धारा 6 की उपधारा (2) के प्रावधान को सरलता से पढ़ने पर पता चलता है कि आपत्तियों को आमंत्रित करने और ऐसे प्रस्तावों पर आपत्तियों पर विचार करने के लिए निर्धारित तरीके से प्रस्ताव को प्रकाशित करने की आवश्यकता केवल राजस्व क्षेत्र की सीमाओं को बदलने के प्रस्ताव के मामले में है। यह वैधानिक व्याख्या का एक सुस्थापित सिद्धांत है कि जहां किसी क़ानून के शब्द स्पष्ट, स्पष्ट या अस्पष्ट हैं, न्यायालय उस अर्थ को प्रभावी करने के लिए बाध्य हैं। इस संबंध में, हम न्यायमूर्ति जी.पी. सिंह द्वारा वैधानिक व्याख्या के सिद्धांतों में किए गए कानून के विवरण का उल्लेख कर सकते हैं, जिसमें यह इस प्रकार कहा गया है: -

> “जब किसी क़ानून के शब्द स्पष्ट, सादे या असंदिग्ध हों, यानी, वे केवल एक ही अर्थ के लिए उचित रूप से संवेदनशील हों, तो न्यायालय परिणामों की परवाह किए बिना उस अर्थ को लागू करने के लिए बाध्य हैं। ससेक्स पीरेज मामले में टिंडल, सी.जे. द्वारा बताया गया नियम इस प्रकार है: “यदि क़ानून के शब्द अपने आप में सटीक और असंदिग्ध हैं, तो उन शब्दों को उनके प्राकृतिक और सामान्य अर्थ में व्याख्या करने से अधिक कुछ भी आवश्यक नहीं हो सकता है। ऐसे मामलों में शब्द स्वयं ही विधि निर्माता के इरादे को सबसे अच्छी तरह से व्यक्त करते हैं”। नियम को दूसरे रूप में भी बताया गया है: 'जब कोई भाषा स्पष्ट और असंदिग्ध हो और केवल एक ही अर्थ को स्वीकार करती हो, तो क़ानून के निर्माण का कोई सवाल ही नहीं उठता, क्योंकि अधिनियम अपने लिए बोलता है।' निर्माण के परिणाम तब न्यायालय के लिए कोई मामला नहीं होते, भले ही वे अजीब या आश्चर्यजनक, अनुचित या अन्यायपूर्ण या दमनकारी हों। विस्काउंट सिमंड्स, एल.सी. ने कहा, "बार-बार, इस बोर्ड ने इस बात पर जोर दिया है कि अधिनियमित शब्दों की व्याख्या करते समय हम संबंधित नीति या

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

हानिकारक या अन्यथा परिणामों से चिंतित नहीं हैं, जो प्रयुक्त भाषा को प्रभावी करने से हो सकते हैं।"

43. याचिकाकर्ताओं द्वारा धारा 6 की उपधारा (2) के प्रावधान पर भरोसा करते हुए उठाया गया तर्क भी इस कारण से खारिज किए जाने योग्य है कि प्रावधान को निर्माण में आंतरिक सहायता के रूप में व्याख्यायित करते समय, यह लगातार माना गया है कि प्रावधान का धारा के अधिनियमित भाग की व्याख्या पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, ताकि अधिनियम के स्पष्ट शब्दों द्वारा निहित निहितार्थ से कुछ को बाहर रखा जा सके। इसके अलावा, यह कानूनी रूप से अच्छी तरह से स्थापित है कि प्रावधान को सामान्य रूप से उक्त धारा द्वारा कवर की गई विषय-वस्तु के संबंध में व्याख्यायित किया जाना चाहिए क्योंकि प्रावधान उस प्रावधान से आगे नहीं जाता है जिसके लिए यह प्रावधान है।

44. प्रावधानों की व्याख्या किस प्रकार की जानी है, इसकी व्याख्या मैक्सवेल ऑन द इंटरप्रिटेशन ऑफ स्टैट्यूट्स13 में की गई है और इसे इस प्रकार कहा गया है:-

> ".....एक परंतुक अनिवार्य रूप से ... अपने संचालन में उस धारा के दायरे तक सीमित होता है जिसके लिए वह योग्य है। और, जहाँ तक उस धारा का संबंध है, परंतुक को फिर से प्रतिबंधित अर्थ प्राप्त होता है: जहाँ धारा शक्तियाँ प्रदान करती है, वहाँ परंतुक के सामान्य संचालन के विपरीत होगा, ताकि उसे ऐसा प्रभाव दिया जा सके जो उन शक्तियों को उस सीमा से परे सीमित कर दे जो कि परंतुक के अनुपालन के लिए आवश्यक है।"

45. निर्माण में आंतरिक सहायता के रूप में प्रावधान के कार्य पर हाल ही में **दिल्ली मेट्रो रेल कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम तरुण पाल सिंह एवं अन्य** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय में निम्नलिखित शब्दों में विस्तार से विचार किया गया है:-

Translated Version: Not for Legal Use

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

“8. धारा 24 के प्रावधान की व्याख्या करने से पहले, हम प्रावधान की व्याख्या से संबंधित नियमों पर विचार करना उचित समझते हैं।

9. क्रेज़ ऑन स्टैच्युट लॉ, 7वें संस्करण में प्रावधानों की व्याख्या के लिए विभिन्न निर्णयों का उल्लेख करते हुए कहा गया है:

9.1. “सामान्य निर्माण नियमों के अनुसार अपवाद या अर्हक प्रावधान का प्रभाव अधिनियम के पिछले भाग को अपवादित करना या उसमें अधिनियमित किसी चीज़ को अर्ह बनाना है, जो प्रावधान के बिना उसके अंतर्गत होता; और ऐसे प्रावधान को अधिनियम के दायरे को बढ़ाने के रूप में नहीं समझा जा सकता है, जब उसे उस प्रभाव को आरोपित किए बिना निष्पक्ष और उचित रूप से व्याख्यायित किया जा सकता है।”

9.2. “जब कोई किसी धारा के लिए प्रावधान पाता है”, लश, जे. ने मुलिंस बनाम ट्रेज़रर ऑफ़ सरे (1880) एलआर 5 क्यूबीडी 170 पृष्ठ पर कहा। 173 (डीसी), "स्वाभाविक धारणा यह है कि, परंतुक के बिना, धारा के अधिनियमित भाग में परंतुक की विषय-वस्तु शामिल होगी।"

9.3. "वेस्ट डर्बी यूनियन बनाम मेट्रोपॉलिटन लाइफ एश्योरेंस सोसाइटी, 1897 एसी 647 (एचएल) में, लॉर्ड वॉटसन ने कहा: (एसी पीपी. 652-53)

> '... मैं पूरी तरह से स्पष्ट हूं कि यदि क़ानून के अधिनियमित भाग की भाषा में वे प्रावधान नहीं हैं, जिनके बारे में कहा जाता है कि वे इसमें शामिल हैं, तो आप इन प्रावधानों को प्रावधान से निहितार्थ द्वारा प्राप्त नहीं कर सकते। जब कोई प्रावधान के प्राकृतिक इतिहास और उद्देश्य को देखता है, और जिस तरह से वे संसद के अधिनियमों में अपना रास्ता खोजते हैं, मुझे लगता है कि आपके लॉर्डशिप एक बहुत ही खतरनाक और निश्चित रूप से असामान्य तरीका अपनाएंगे यदि आप प्रावधान से कानून को पूरी तरह से क़ानून के मुख्य भाग में आयात करते हैं, हालांकि मैं पूरी तरह से स्वीकार करता हूं कि ऐसे कई मामले हो सकते हैं और हैं जिनमें एक समझदार प्रावधान की शर्तें वैधानिक शब्दों के अस्पष्ट आयात पर काफी प्रकाश डाल सकती हैं।'

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

और उसी मामले में लॉर्ड हर्शेल ने कहा: (वेस्ट डर्बी यूनियन बनाम मेट्रोपॉलिटन लाइफ एश्योरेंस सोसाइटी, 1897 एसी 647 (एचएल), एसी पी. 655)

> '... मैं किसी भी अधिनियम में ऐसे शब्दों को पढ़ने से इनकार करता हूँ जो वहाँ नहीं पाए जाते हैं और जो किसी प्रावधान में पाए जाने वाले प्रावधानों के कारण इसके संचालन प्रभाव को बदल देंगे।'

हालाँकि उन्होंने स्वीकार किया कि प्रावधान अधिनियम में शब्दों के दो संभावित निर्माणों में से एक या दूसरे के चयन में या किसी संदिग्ध मामले में बाद के दायरे को दिखाने में एक उपयोगी मार्गदर्शक हो सकता है।

आर. बनाम डिबडिन 1910 एसी 57 (सीए) में, मौलटन, एल.जे. ने कहा: (एसी पी. 125-26)

> 'व्याख्या की प्रस्तावित पद्धति की भ्रांति दूर नहीं है। यह निर्माण के मूल नियम के विरुद्ध है कि किसी प्रावधान पर उस मुख्य मामले के संबंध में विचार किया जाना चाहिए जिसके लिए वह प्रावधान है। यह इसे इस तरह से मानता है जैसे कि यह मुख्य अधिनियम पर निर्भर होने के बजाय एक स्वतंत्र अधिनियमित खंड हो। उदाहरण के लिए, पार्टिंगटन, एक्स पी, (1844) 6 क्यूबी 649 में न्यायालयों ने इस तरह से व्यवहार किया। 653: 115 ईआर 244, ब्रोकेलबैंक, इन रे, एक्स पी डन एंड रेबर्न (1889) एलआर 23 क्यूबीडी 461 (सीए) और हिल बनाम ईस्ट एंड वेस्ट इंडिया डॉक कंपनी (1884) एलआर 9 एसी 448 (एचएल) ने अक्सर इस भ्रांति की ओर इशारा किया है, और इस तरह के तर्कों से गुमराह होने से इनकार कर दिया है, जो हमें संबोधित किए गए हैं, जो केवल शब्दों को उनके सख्त शाब्दिक अर्थ में लेने पर निर्भर करते हैं, इस मौलिक विचार की उपेक्षा करते हुए कि वे प्रावधान में दिखाई दे रहे हैं।

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

इसलिए, जहाँ धारा 65, धारा 62 से आगे की धाराओं के समूह में एक निजी अधिनियम में है, जिसके बगल में एक नोट "सीवर - स्वच्छता व्यवस्था" था, जिसमें यह प्रावधान था कि:

> 'अधिनियम में कुछ भी न्यूकैसल-ऑन-टाइन निगम को उपद्रव करने के लिए अधिकृत नहीं करेगा' और सुधार अधिनियम, 1885 की धारा 22 निगम को यात्रियों और यातायात की सुरक्षा के लिए खंभे, रेल और बाड़ लगाने के लिए अधिकृत करती है, यह तर्क दिया गया कि इस प्राधिकरण को उपद्रव के संबंध में प्रावधान के अधीन पढ़ा जाना चाहिए; लेकिन अदालत ने माना कि प्रावधान केवल उन धाराओं के समूह को प्रभावित करता है जिनसे यह जुड़ा हुआ था और यह धारा 22 का प्रावधान नहीं था। लेकिन धाराएँ, यद्यपि पूर्ववर्ती धाराओं पर प्रावधान के रूप में तैयार की गई हैं, अपवादस्वरूप ऐसी बातें शामिल कर सकती हैं जो मूल रूप से एक नया अधिनियम है, जो पहले की बातों को केवल योग्य नहीं बनाती बल्कि उसमें कुछ और जोड़ती है।'

10. निज़ाम के धार्मिक बंदोबस्ती ट्रस्ट बनाम सीआईटी (एआईआर 1966 एससी 1007) में, इस न्यायालय ने टिप्पणी की है: (एआईआर पृष्ठ 1010, पैरा 7)

> "7. जैसा कि क्रेज़ ने अपनी पुस्तक क़ानून पर, 6वें संस्करण में पृष्ठ 217 पर बताया है:
>
> 'सामान्य निर्माण नियमों के अनुसार अपवाद या अर्हक प्रावधान का प्रभाव अधिनियम के पिछले भाग को बाहर करना या उसमें अधिनियमित किसी चीज़ को अर्ह बनाना है, जो प्रावधान के बिना इसके अंतर्गत होता।'

खंड (i) का प्रावधान आय के दो वर्गों को मूल खंड के संचालन से अपवादित करता है, जो उसमें उल्लिखित शर्त के अधीन है। यह तभी लागू होता है जब उक्त आय कर योग्य क्षेत्रों के बिना

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

धार्मिक या धर्मार्थ उद्देश्यों के लिए लागू की जाती है। ऐसी स्थिति में, केंद्रीय राजस्व बोर्ड, सामान्य या विशेष आदेश द्वारा, निर्देश दे सकता है कि इसे कुल आय में शामिल नहीं किया जाएगा। प्रावधान खंड (i) के मूल भाग के निर्माण पर भी प्रकाश डालता है क्योंकि अपवाद केवल कर योग्य क्षेत्रों के बाहर उक्त उद्देश्यों के लिए आय के आवेदन पर ही लागू किया जा सकता है। कर योग्य क्षेत्रों में या उसके बाहर के उद्देश्यों के लिए वर्तमान या भविष्य में आय का आवेदन, जैसा भी मामला हो, खंड के मूल भाग या प्रावधान को लागू करने के लिए आवश्यक शर्त है।

11. केदारनाथ जूट मैन्युफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड बनाम सीटीओ (एआईआर 1966 एससी 12) में, इस न्यायालय ने प्रावधान के उद्देश्य पर इस प्रकार चर्चा की है: (एआईआर पृष्ठ 14, पैरा 8)

“8. अधिनियम की धारा 5(2)(ए)(ii) प्रभावी रूप से डीलर के निर्दिष्ट टर्नओवर को बिक्री कर से छूट देती है। इसलिए, छूट निर्धारित करने वाले प्रावधान की सख्ती से व्याख्या की जाएगी। मूल खंड छूट देता है और परंतुक मूल खंड को योग्य बनाता है। वास्तव में, परंतुक कहता है कि उप-खंड (ii) की शर्तों के अंतर्गत आने वाले विक्रेता डीलर के टर्नओवर के हिस्से को छूट दी जाएगी, बशर्ते निर्धारित प्रपत्र में घोषणा प्रस्तुत की जाए। दूसरे शब्दों में कहें तो, डीलर को तब तक छूट नहीं मिल सकती जब तक कि वह निर्धारित प्रपत्र में घोषणा प्रस्तुत न करे। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि 'निर्माण के सामान्य नियमों के अनुसार अपवाद या अर्हक परंतुक का प्रभाव अधिनियम के पिछले भाग को बाहर करना या उसमें अधिनियमित किसी चीज़ को योग्य बनाना है, जो परंतुक के बिना इसके अंतर्गत होता': क्रेज़ ऑन स्टेट्यूट लॉ, 6वां संस्करण, पृष्ठ देखें। 217. यदि विधानमंडल का इरादा उप-खंड (ii) के मूल भाग की शर्तों का अनुपालन करने पर छूट देने का था, तो परंतुक अनावश्यक और निरर्थक हो जाता है। अपीलकर्ता के विद्वान वकील के तर्क को स्वीकार करना परंतुक को पूरी तरह से नजरअंदाज करना है, क्योंकि यदि उनका तर्क सही है तो यह स्थिति उत्पन्न होगी कि यदि घोषणा पत्र प्रस्तुत किया जाता है, तो ठीक है; लेकिन, यदि प्रस्तुत नहीं किया जाता है, तो अन्य साक्ष्य प्रस्तुत किए जा सकते हैं। यह खंड को फिर से लिखना और परंतुक को छोड़ना है। यह विधानमंडल के स्पष्ट इरादे को विफल कर देगा। न ही नियम 27-ए विपरीत निर्माण का समर्थन करता है। "मांग पर" अभिव्यक्ति केवल

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

उस समय को निर्धारित करती है जब घोषणा पत्र प्रस्तुत किए जाने हैं; अन्यथा, नियम धारा के साथ असंगत होगा। धारा 5(2)(ए)(ii) में कहा गया है कि घोषणा पत्र डीलर द्वारा प्रस्तुत किया जाना है और नियम 27-ए में कहा गया है कि इसे मांग किए जाने पर प्रस्तुत किया जाएगा, अर्थात यह उस समय को निश्चित करता है जब फॉर्म प्रस्तुत किया जाना है। यह नियम 27-ए के प्रावधानों को अधिनियम की धारा 5(2)(ए)(ii) के प्रावधानों के साथ सामंजस्य स्थापित करता है, जबकि विद्वान वकील द्वारा सुझाए गए निर्माण में असंगति है जिसे टाला जाना चाहिए। धारा 21-ए जिस पर भरोसा किया गया है, उसका निर्णय किए जाने वाले प्रश्न पर कोई असर नहीं पड़ता है। यह केवल आयुक्त या धारा 3 की उप-धारा (1) के तहत उनकी सहायता के लिए नियुक्त किसी व्यक्ति को शपथ आदि पर साक्ष्य लेने का अधिकार देता है। इसे केवल उस मामले में लागू किया जा सकता है जहां संबंधित अधिकारी को किसी विशेष मामले के संबंध में साक्ष्य लेने का अधिकार है, लेकिन यह उसे छूट का दावा करने के लिए वैधानिक शर्त की अनदेखी करने में सक्षम नहीं बनाता है।

12. ईश्वरलाल ठाकोरलाल अलमौला बनाम मोतीभाई नागजीभाई (एआईआर 1966 एससी 459) में प्रावधान के आशय पर इस प्रकार चर्चा की गई है: (एआईआर पृष्ठ 465, पैरा 8)

“8. किसी प्रावधान का उचित कार्य मूल खंड में अधिनियमित किसी चीज़ को अपवादित या योग्य बनाना है, जो प्रावधान के बिना उस खंड के अंतर्गत आता। प्रावधान की व्याख्या करते समय आमतौर पर यह माना जा सकता है कि इसका उद्देश्य यह था कि धारा के अधिनियमित भाग में प्रावधान की विषय-वस्तु शामिल होगी। लेकिन सवाल प्रावधान की व्याख्या का है और ऐसा कोई नियम नहीं है कि प्रावधान को हमेशा मुख्य अधिनियम के दायरे तक ही सीमित रखा जाना चाहिए। कभी-कभी किसी क़ानून में प्रावधान पूर्ववर्ती धारा की विषय-वस्तु से असंबंधित होता है या उसमें उस धारा से बाहर के मामले शामिल होते हैं और तब इसकी व्याख्या मूल प्रावधान के रूप में की जा सकती है, जो उसमें निर्दिष्ट मामले से स्वतंत्र रूप से निपटता है, न कि मुख्य या पूर्ववर्ती धारा को योग्य बनाने के रूप में।”

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

13. शाह भोजराज कुवेरजी ऑयल मिल्स एंड जिनिंग फैक्ट्री बनाम सुभाष चंद्र योगराज सिन्हा (एआईआर 1961 एससी 1596) में, इस न्यायालय ने प्रावधान के उद्देश्य और इसकी व्याख्या कैसे की जाए, इस पर चर्चा की है: (एआईआर पृष्ठ 1600, पैरा 9)

"9. प्रावधानों के संबंध में कानून अच्छी तरह से स्थापित और अच्छी तरह से समझा गया है। एक सामान्य नियम के रूप में, किसी अधिनियम में प्रावधान जोड़ा जाता है ताकि अधिनियम में जो कुछ है, उसके लिए योग्यता या अपवाद बनाया जा सके और आमतौर पर प्रावधान की व्याख्या सामान्य नियम के रूप में नहीं की जाती है। लेकिन, प्रावधान अक्सर मुख्य अधिनियम में अपवाद या योग्यता के रूप में नहीं बल्कि बचत खंडों के रूप में जोड़े जाते हैं, ऐसे मामलों में उन्हें धारा द्वारा नियंत्रित नहीं माना जाएगा। अधिनियम की धारा 50 में जो प्रावधान जोड़ा गया है, वह निरसन के प्रभाव से संबंधित है। धारा के मूल भाग ने दो अधिनियमों को निरस्त कर दिया जो बॉम्बे राज्य में लागू थे। यदि और कुछ नहीं कहा गया होता, तो बॉम्बे सामान्य खंड अधिनियम की धारा 7 लागू होती और सभी लंबित मुकदमे और कार्यवाही पुराने कानून के तहत जारी रहती जैसे कि निरसन अधिनियम पारित नहीं हुआ था। परंतुक का प्रभाव यह था कि मामले को बॉम्बे जनरल क्लॉज एक्ट की धारा 7 से बाहर ले जाया गया और विशेष बचत प्रदान की गई। इसका उपयोग यह तय करने के लिए नहीं किया जा सकता कि अधिनियम की धारा 12 पूर्वव्यापी है या नहीं। वुड, वी.सी. ने फिट्ज़गेराल्ड बनाम चैंपनीज़ (1861) 2 जेएंडएच 31: 70 ईआर 958) में देखा कि बचत खंडों का उपयोग शायद ही कभी अधिनियमों की व्याख्या करने के लिए किया जाता है। इन खंडों को उन अधिनियमों में पेश किया जाता है जो दूसरों को निरस्त करते हैं, अधिकारों की रक्षा के लिए जो बचत के बिना खो जाते। यहाँ परंतुक लंबित मुकदमों और कार्यवाहियों को बचाता है, और आगे यह अधिनियमित करता है कि उस समय लंबित मुकदमों और कार्यवाहियों को अधिनियम में निर्दिष्ट न्यायालयों में स्थानांतरित किया जाना चाहिए और अधिनियम के तहत जारी रहना चाहिए और अधिनियम के कोई या सभी प्रावधान उन पर लागू होने चाहिए। विद्वान सॉलिसिटर जनरल का तर्क है कि प्रावधान द्वारा अधिनियमित बचत खंड, भले ही उसे मूल कानून माना जाए, उसे केवल निरसन के समय लंबित मुकदमों और कार्यवाहियों पर ही लागू माना जाना चाहिए, जो प्रावधान के बिना, निरस्त अधिनियम द्वारा शासित होंगे। विद्वान अटॉर्नी जनरल के अनुसार, बचत का प्रभाव बहुत

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

व्यापक है, और यह ऐसे मामलों पर लागू होता है जो प्रावधान के शब्दों के अंतर्गत आते हैं, जब भी अधिनियम को नए क्षेत्रों में विस्तारित किया जाता है।"

14. एस. सुंदरम पिल्लई बनाम वी.आर. पट्टाभिरामन (1985) 1 एससीसी 591 में, इस न्यायालय ने प्रावधान के संबंध में विभिन्न निर्णयों पर विस्तार से विचार किया है और इस मामले पर इस प्रकार चर्चा की है: (एससीसी पृष्ठ 607-11, पैरा 29-44)

"29. निर्माण के विलेखों और विधियों में ओडर्स (5वां संस्करण) ने प्रावधान के दायरे का उल्लेख करते हुए निम्नलिखित तत्वों का उल्लेख किया:

'पृष्ठ 317. प्रावधान- ये किसी अधिनियम में अपवाद या योग्यता के खंड हैं, जो अधिनियम में से कुछ को बाहर करते हैं या कुछ को योग्य बनाते हैं, जो प्रावधान के बिना, अधिनियम के अंतर्गत होता।

पृष्ठ 318. हालांकि प्रावधान के रूप में तैयार किया गया है, ऐसा खंड अपवादस्वरूप एक मूल अधिनियम का प्रभाव रख सकता है।'

30. सारथी ने व्याख्या के नियमों में पृष्ठ 294-95 पर प्रावधान के संबंध में निम्नलिखित सिद्धांतों को एकत्र किया है:

(क) जब कोई धारा में प्रावधान पाता है तो स्वाभाविक धारणा यह है कि प्रावधान के बिना, धारा के अधिनियमित भाग में प्रावधान की विषय-वस्तु शामिल होती।

(ख) प्रावधान की व्याख्या उस खंड के पूर्ववर्ती भागों के संदर्भ में की जानी चाहिए, जिसके साथ वह संलग्न है।

(ग) जहां परंतुक किसी धारा के सीधे प्रतिकूल है, वहां वह परंतुक धारा का निरसन माना जाएगा क्योंकि वह निर्माताओं के बाद के इरादे को दर्शाता है।

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

(घ) जहां धारा संदिग्ध है, वहां परंतुक का उपयोग उसकी व्याख्या के लिए मार्गदर्शक के रूप में किया जा सकता है: लेकिन जब यह स्पष्ट हो, तो परंतुक उन शब्दों के अस्तित्व को नहीं दर्शा सकता जिनका धारा में कोई निशान नहीं है।

(ङ) परंतुक मुख्य धारा के अधीन है।

(च) परंतुक किसी अधिनियम को बाध्यकारी कारणों के अलावा विस्तृत नहीं करता।

(छ) कभी-कभी अत्यधिक सावधानी के तौर पर अनावश्यक परंतुक डाला जाता है।

(ज) परंतुक पर रखा गया निर्माण जो इसे धारा की शर्तों के साथ सामान्य सामंजस्य में लाता है, उसे लागू होना चाहिए।

(झ) जब कोई प्रावधान अधिनियमित भाग के प्रतिकूल हो, तो वह प्रावधान बाद के अधिनियम की पूर्ण शर्तों पर लागू नहीं होगा, जिसे पहले वाले अधिनियम के पूरक के रूप में पढ़ा जाना है।

(j) एक प्रावधान में कभी-कभी एक मूल प्रावधान हो सकता है।

31. लोकल गवर्नमेंट बोर्ड बनाम साउथ स्टोनहैम यूनियन 1909 एसी 57 (एचएल) में, लॉर्ड मैकनाघटन ने निम्नलिखित अवलोकन किया: (एसी पृष्ठ 62)

'... मुझे लगता है कि प्रावधान पिछले अधिनियम की एक योग्यता है जिसे बहुत सामान्य शब्दों में व्यक्त किया गया है जो बिल्कुल सटीक नहीं है।'

32. ईश्वरलाल ठाकोरलाल अलमौला बनाम मोतीभाई नागजीभाई एआईआर 1966 एससी 459] में, यह माना गया कि प्रावधान का मुख्य उद्देश्य केवल मुख्य अधिनियम को योग्य बनाना है। मद्रास और दक्षिणी महरत्ता रेलवे कंपनी लिमिटेड बनाम बेजवाड़ा नगर पालिका [मद्रास और दक्षिणी महरत्ता रेलवे कंपनी लिमिटेड बनाम बेजवाड़ा नगर पालिका, 1944 एससीसी ऑनलाइन पीसी 7: (1943-44) 71 आईए 113: एआईआर 1944 पीसी 71] में, लॉर्ड मैकमिलन ने इस प्रकार टिप्पणी की: (एससीसी ऑनलाइन पीसी)

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

'... प्रावधान का उचित कार्य ऐसे मामले को छोड़ना और उससे निपटना है जो अन्यथा मुख्य अधिनियम की सामान्य भाषा के अंतर्गत आता है, और इसका प्रभाव उस मामले तक ही सीमित है।'

33. उपरोक्त मामले को इस न्यायालय ने सीआईटी बनाम इंडो-मर्केंटाइल बैंक लिमिटेड 1959 एससी 713: 1959 सप (2) एससीआर 256 में मंजूरी दी थी, जहां जस्टिस कपूर ने माना था कि प्रावधान का उचित कार्य केवल मुख्य अधिनियम की व्यापकता को एक अपवाद प्रदान करके और मुख्य अधिनियम से एक भाग को बाहर निकालकर, जो प्रावधान के बिना मुख्य अधिनियम के अंतर्गत आता है, अर्हता प्राप्त करना था। शाह भोजराज कुवेर्जी ऑयल मिल्स एंड जिनिंग फैक्ट्री बनाम सुभाष चंद्र योगराज सिन्हा एआईआर 1961 एससी 1596 में जस्टिस हिदायतुल्ला ने, जो उस समय थे, प्रावधान के मापदंडों को बहुत उपयुक्त और संक्षिप्त रूप से इस प्रकार इंगित किया: (एआईआर पृष्ठ 1600, पैरा 9)

'9... एक सामान्य नियम के रूप में, किसी अधिनियम में एक प्रावधान जोड़ा जाता है ताकि अधिनियम में जो कुछ है, उसके लिए एक अपवाद बनाया जा सके या उसे योग्य बनाया जा सके, और आमतौर पर, किसी प्रावधान की व्याख्या एक सामान्य नियम के रूप में नहीं की जाती है।'

34. वेस्ट डर्बी यूनियन बनाम मेट्रोपॉलिटन लाइफ एश्योरेंस सोसाइटी, 1897 एसी 647 (एचएल) में, प्रावधान की व्याख्या के खतरे से बचते हुए, लॉर्ड वॉटसन ने इस प्रकार टिप्पणी की: (एसी पृष्ठ 653)

'... एक बहुत ही खतरनाक और निश्चित रूप से असामान्य तरीका है यदि आप किसी प्रावधान से कानून को पूरी तरह से क़ानून के मुख्य भाग में आयात करते हैं....'

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

35. लॉर्ड लॉरबर्न द्वारा रोंडा अर्बन डिस्ट्रिक्ट काउंसिल बनाम टैफ वेले रेलवे कंपनी, 1909 एसी 253 (एचएल) में प्रावधान का बहुत सटीक वर्णन और विस्तार दिया गया था, जहाँ यह बताया गया था कि ड्राफ्ट्समैन द्वारा प्रावधान को शामिल करना हमेशा इसके वैध उपयोग के लिए सख्ती से पालन नहीं किया जाता है और कई बार प्रावधान के रूप में शब्दबद्ध एक धारा पूरी तरह या आंशिक रूप से एक नया अधिनियम हो सकती है जो पहले से मौजूद किसी चीज को छोड़कर या उसे योग्य बनाने के बजाय उसमें कुछ जोड़ती है। इसी प्रभाव के लिए उसी न्यायालय का बाद का निर्णय जेनिंग्स बनाम केली, 1940 एसी 206 (एचएल) में है, जिसमें यह इस प्रकार देखा गया था: (एसी पृष्ठ 216)

> 'हमें अब प्रावधान पर आना चाहिए, क्योंकि मुझे लगता है कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि धारा के निर्माण में, इसे पूरी तरह से पढ़ा जाना चाहिए और यदि संभव हो तो इसके हर हिस्से को एक सुसंगत अर्थ दिया जाना चाहिए। शब्द हैं: "बशर्ते कि ऐसा लाइसेंस केवल उस वार्ड या जिला निर्वाचन प्रभाग में स्थित परिसर के लिए दिया जाएगा जिसमें जनसंख्या में ऐसी वृद्धि हुई है।" इसमें कोई संदेह नहीं है कि "जनसंख्या में ऐसी वृद्धि" शब्द धारा के शुरुआती शब्दों में उल्लिखित जनसंख्या के 25 प्रतिशत से कम की वृद्धि को संदर्भित करते हैं।'

36. किसी प्रावधान की व्याख्या करते समय ध्यान रखा जाना चाहिए कि इसका उपयोग सामान्य अधिनियम से विशेष मामलों को हटाने और उनके लिए अलग से प्रावधान करने के लिए किया जाता है।

37. संक्षेप में, सामान्य रूप से, एक परंतुक का उद्देश्य अधिनियमित प्रावधान को सीमित करना होता है ताकि कुछ ऐसा अपवाद हो जो अन्यथा इसके अंतर्गत होता या कुछ हद तक अधिनियमित खंड को संशोधित किया जा सके। कभी-कभी एक परंतुक मुख्य प्रावधान में अंतर्निहित हो सकता है और इसका एक अभिन्न अंग बन जाता है ताकि यह स्वयं एक मूल प्रावधान बन जाए।

38. ऊपर उल्लिखित प्राधिकारियों के अलावा, इस न्यायालय ने अपने निर्णयों की एक लंबी श्रृंखला में परंतुक के विभिन्न पहलुओं, पहलुओं और तत्वों को स्पष्ट और स्पष्ट किया है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

राजस्थान राज्य बनाम लीला जैन, एआईआर 1965 एससी 1296 में, निम्नलिखित टिप्पणियां की गईं: (एआईआर पृष्ठ 1300, पैरा 41)

'14. ... जहां तक प्रावधान के निर्माण के सामान्य सिद्धांत का सवाल है, मोटे तौर पर यह कहा गया है कि प्रावधान का कार्य धारा के मुख्य भाग को सीमित करना और कुछ ऐसा निकालना है जो प्रावधान के बिना परिचालन भाग के अंतर्गत आता।'

39. एसटीओ बनाम हनुमान प्रसाद, एआईआर 1967 एससी 565 में, जस्टिस भार्गव ने इस प्रकार टिप्पणी की: (एआईआर पृष्ठ 567, पैरा 5)

'5. ... यह सर्वविदित है कि मुख्य धारा में परंतुक मुख्य रूप से इस उद्देश्य से जोड़ा जाता है कि मुख्य धारा के दायरे से वह सब कुछ हटा दिया जाए जो इसमें शामिल है और जिसे विधायिका बाहर रखना चाहती है।'

40. सीसीटी बनाम झावेर रामकिशन श्रीकिशन, एआईआर 1968 एससी 59 में, इस न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणियाँ कीं: (एआईआर पृष्ठ 63, पैरा 8)

'8. ... सामान्य रूप से, यह सच है कि परंतुक धारा के मुख्य भाग का अपवाद है; लेकिन यह माना जाता है कि अपवादात्मक मामलों में एक परंतुक स्वयं एक मूलभूत प्रावधान हो सकता है।'

41. द्वारका प्रसाद द्वारका दास सराफ (1976) 1 एससीसी 128 में, कृष्णा अय्यर, जे. ने न्यायालय की ओर से बोलते हुए इस प्रकार टिप्पणी की: (एससीसी पृष्ठ 136-37, पैरा 16 और 18):

'16. इस दलील में कुछ वैधता है लेकिन अगर निष्पक्ष निर्माण पर, मुख्य प्रावधान स्पष्ट है, तो कोई परंतुक इसे विस्तारित या सीमित नहीं कर सकता है। कभी-कभी संभावित संदेहों को दूर करने, मामलों को स्पष्ट करने, अस्पष्ट किनारों को उजागर करने के लिए एक आशंकित ड्राफ्ट्समैन द्वारा एक परंतुक जोड़ दिया जाता है। यहां, ऐसा ही मामला है।

x x x x x x

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

18. ... यदि निर्माण का नियम यह है कि प्रथम दृष्टया एक परंतुक अपने संचालन में अधिनियमित खंड की विषय-वस्तु तक सीमित होना चाहिए, तो हमने जो रुख अपनाया है वह सही है। अधिनियमन खंड का विस्तार करना, जो कि प्रावधान द्वारा बढ़ा दिया गया है, निर्माण के उस मौलिक नियम के विरुद्ध है कि प्रावधान को उस मुख्य मामले के संबंध में माना जाना चाहिए जिसके लिए वह प्रावधान के रूप में खड़ा है। प्रावधान आम तौर पर एक प्रावधान ही होता है, हालांकि सुनहरा नियम यह है कि प्रावधान सहित पूरे खंड को इस तरह से पढ़ा जाए कि वे परस्पर एक दूसरे पर प्रकाश डालें और एक सामंजस्यपूर्ण निर्माण में परिणत हों।

42. हीरालाल रतनलाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (1973) 1 एससीसी 216: 1973 एससीसी (कर) 307 में, इस न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणियां कीं: [एससीसी पैरा 22, पृष्ठ 224: एससीसी (कर) पृष्ठ 315]

'22. ... आम तौर पर किसी धारा के लिए प्रावधान का उद्देश्य विशेष उपचार के लिए मुख्य धारा का एक हिस्सा निकालना होता है। इससे मुख्य धारा के दायरे को बढ़ाने की उम्मीद नहीं की जाती है। लेकिन ऐसे मामले सामने आए हैं जिनमें इस न्यायालय ने माना है कि इस तथ्य के बावजूद कि किसी प्रावधान को प्रावधान कहा जाता है, यह वास्तव में एक अलग प्रावधान है और तथाकथित प्रावधान ने मुख्य धारा को काफी हद तक बदल दिया है।'

43. हमें इस बिंदु पर अधिकारियों की संख्या बढ़ाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि कानूनी स्थिति स्पष्ट रूप से और स्पष्ट रूप से अच्छी तरह से स्थापित प्रतीत होती है। संक्षेप में, एक प्रावधान चार अलग-अलग उद्देश्यों की पूर्ति कर सकता है:

(1) मुख्य अधिनियम से कुछ प्रावधानों को योग्य बनाना या अपवादित करना;

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

(2) यह अधिनियम को कार्यान्वयन योग्य बनाने के लिए कुछ अनिवार्य शर्तों को पूरा करने पर जोर देकर अधिनियम के आशय की अवधारणा को पूरी तरह से बदल सकता है;

(3) यह अधिनियम में ही इस प्रकार अंतर्निहित हो सकता है कि यह अधिनियम का अभिन्न अंग बन जाए और इस प्रकार मूल अधिनियम का स्वरूप और रंग प्राप्त कर ले; और

(4) इसका उपयोग केवल वैधानिक प्रावधान के वास्तविक आशय को स्पष्ट करने के एकमात्र उद्देश्य से अधिनियम के वैकल्पिक परिशिष्ट के रूप में किया जा सकता है।

44. ये मोटे तौर पर प्रावधान के मुख्य अभिप्राय और मापदंड प्रतीत होते हैं।

15. दिब्यसिंह मलाना बनाम उड़ीसा राज्य, 1989 अनुपूरक (2) एससीसी 312: एआईआर 1989 एससी 1737 में, इस न्यायालय ने प्रावधान के प्रभाव पर विचार किया और टिप्पणी की: (एससीसी पृष्ठ 316-17, पैरा 7)

‘7. अधिनियम की धारा 37(बी) में "परिवार" शब्द की परिभाषा को सरलता से पढ़ने पर हमारा विचार है कि उक्त परिभाषा न तो अर्थहीन है और न ही संदिग्ध अर्थ वाली है। इस संबंध में, यह बताया जा सकता है कि अधिनियम द्वारा परिकल्पित कृषि सुधार और विशेष रूप से अधिशेष भूमि की सीमा और निपटान से संबंधित अध्याय IV के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, जो कि बड़े भूस्वामियों की अधिशेष भूमि को राज्य के भारी वंचितों के बीच वितरित करने के लिए गणना की गई थी, विधानमंडल ने अपनी बुद्धिमता में "परिवार" शब्द को एक कृत्रिम अर्थ दिया। इस शब्द की परिभाषा वाला मुख्य प्रावधान धारा 37(बी) के पहले भाग में पाया जाता है, अर्थात्, 'किसी व्यक्ति से संबंधित परिवार का अर्थ है व्यक्ति, पति या पत्नी, जैसा भी मामला हो, ऐसे व्यक्ति और उनके बच्चे, चाहे वे वयस्क हों या नाबालिग', धारा 37(बी) का बाद का भाग, अर्थात्, 'लेकिन इसमें वयस्क विवाहित पुत्र शामिल नहीं है, जो इस तरह से 26 सितंबर 1970 से पहले विभाजन या अन्यथा अलग हो गया था', इसमें ऐसा कोई मामला नहीं है

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

Translated Version: Not for Legal Use

जिसे मूल रूप से मुख्य प्रावधान में कुछ जोड़ने वाला एक नया अधिनियम माना जा सकता है, लेकिन यह स्पष्ट रूप से और स्पष्ट रूप से एक अपवाद युक्त प्रावधान है। 'लेकिन इसमें शामिल नहीं है' शब्दों के मद्देनजर इसमें कोई संदेह नहीं है। सीआईटी बनाम इंडो-मर्केंटाइल बैंक लिमिटेड, एआईआर 1959 एससी 713: 1959 सप (2) एससीआर 256 में यह माना गया था: (एआईआर पृष्ठ 716, पैरा 5)

> '5. ... आम तौर पर अपवाद या अर्हक प्रावधान का प्रभाव पूर्ववर्ती अधिनियम से कुछ अलग करना या उसमें अधिनियमित किसी चीज़ को अर्ह बनाना होता है जो प्रावधान के बिना उसमें होता और ऐसे प्रावधान को अधिनियम के दायरे को बढ़ाने के रूप में नहीं समझा जा सकता जब उसे उस प्रभाव को जिम्मेदार ठहराए बिना निष्पक्ष और उचित रूप से समझा जा सकता है।'

16. कुश सैगल बनाम एम.सी. मित्तर (2000) 4 एससीसी 526: एआईआर 2000 एससी 1390 में, इस न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की है: (एससीसी पृष्ठ 538, पैरा 32) "32. धारा 21 की उपधारा (1) के अंतर्गत, मकान मालिक किरायेदार को इस आधार पर बेदखल करने के लिए आवेदन कर सकता है कि भवन या तो अपने मौजूदा स्वरूप में या मकान मालिक द्वारा ध्वस्तीकरण और नए निर्माण के बाद स्वयं या उसके परिवार के किसी सदस्य द्वारा आवासीय प्रयोजनों या किसी पेशे, व्यापार या व्यवसाय के प्रयोजनों के लिए कब्जे के लिए या इस आधार पर कि भवन जो जीर्ण-शीर्ण अवस्था में था, ध्वस्तीकरण और नए निर्माण के प्रयोजनों के लिए आवश्यक था। उप-धारा (2) का दूसरा प्रावधान हालांकि यह प्रावधान करता है कि-

‘किसी आवासीय भवन के मामले में खंड (क) के तहत आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा, जिसका उपयोग व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए किया जा रहा है।’

इस प्रकार, यदि मकान मालिक द्वारा किरायेदार को बेदखल करने के लिए इस आधार पर आवेदन किया जाता है कि किरायेदार के कब्जे में जो इमारत थी, जिसका उपयोग केवल आवासीय उद्देश्यों के लिए किया जाता था, वह व्यावसायिक उद्देश्यों या किसी अन्य

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

Translated Version: Not for Legal Use.

वाणिज्यिक गतिविधि के लिए आवश्यक थी, तो यह नए अधिनियम की धारा 21(1) के अर्थ में किरायेदार को बेदखल करने का आधार नहीं होगा और आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा। हम ऐसा इसलिए कह रहे हैं क्योंकि प्रावधान का सामान्य कार्य अधिनियम से कुछ को बाहर करना या उसमें अधिनियमित किसी चीज़ को योग्य बनाना है जो प्रावधान के बिना अधिनियम के दायरे में होगी। (देखें: केदारनाथ जूट विनिर्माण कंपनी लिमिटेड बनाम सीटीओ, एआईआर 1966 एससी 12) चूंकि स्वाभाविक धारणा यह है कि प्रावधान के बिना, धारा के अधिनियमित भाग में प्रावधान की विषय-वस्तु शामिल होती, इसलिए अधिनियमित भाग को ऐसा निर्माण दिया जाना चाहिए जो प्रावधान द्वारा बनाए गए अपवादों को आवश्यक बना दे और ऐसा निर्माण जो अपवादों को अनावश्यक और निरर्थक बना दे, उससे बचा जाना चाहिए (देखें: न्यायमूर्ति जी.पी. सिंह के "वैधानिक व्याख्या के सिद्धांत" सातवें संस्करण 1999, पृष्ठ 163)। यह सिद्धांत प्रिवी काउंसिल के बॉम्बे प्रांत बनाम होर्मुसजी मानेकजी, 1947 एससीसी ऑनलाइन पीसी 34: (1946-47) 74 आईए 103: एआईआर 1947 पीसी 200 के निर्णय से लिया गया है, साथ ही दुर्गा दत्त शर्मा बनाम नवरत्न फार्मास्युटिकल लेबोरेटरीज (एआईआर 1965 एससी 980) में इस न्यायालय के निर्णय से भी लिया गया है।"

17. हरियाणा राज्य सहकारी भूमि विकास बैंक लिमिटेड बनाम कर्मचारी संघ (2004) 1 एससीसी 574: 2004 एससीसी (एलएंडएस) 257 में, इस न्यायालय ने प्रावधान के सामान्य कार्य पर विचार किया है और इस प्रकार टिप्पणी की है: (एससीसी पृष्ठ 579-80, पैरा 9 और 11)

"9. प्रावधान का सामान्य कार्य अधिनियम से कुछ को बाहर करना या उसमें अधिनियमित किसी चीज़ को योग्य बनाना है जो प्रावधान के बिना अधिनियम के दायरे में आता। जैसा कि मुलिंस बनाम ट्रेजरर ऑफ़ सरे (1880) एलआर 5 क्यूबीडी 170 पृष्ठ पर कहा गया था। 173 (डीसी)

(शाह भोजराज कुवेरजी ऑयल मिल्स एंड जिनिंग फैक्ट्री बनाम सुभाष चंद्र योगराज सिन्हा (एआईआर 1961 एससी 1596) और कलकत्ता ट्रामवेज कंपनी लिमिटेड बनाम कलकत्ता कॉरपोरेशन (एआईआर 1965 एससी 1728) में संदर्भित), जब कोई किसी धारा में प्रावधान पाता

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

है तो स्वाभाविक अनुमान यह है कि प्रावधान के बिना, धारा के अधिनियमित भाग में प्रावधान की विषय-वस्तु शामिल होगी। प्रावधान का उचित कार्य अपवाद करना और उस मामले से निपटना है जो अन्यथा मुख्य अधिनियम की सामान्य भाषा के अंतर्गत आता है और इसका प्रभाव उस मामले तक ही सीमित है। यह पिछले अधिनियम की एक योग्यता है जिसे बहुत सामान्य शब्दों में व्यक्त किया गया है जो बिल्कुल सटीक नहीं है। एक सामान्य नियम के रूप में, किसी अधिनियम में प्रावधान जोड़ा जाता है ताकि अधिनियम में जो कुछ है उसके लिए एक अपवाद बनाया जा सके और

आमतौर पर, किसी प्रावधान की व्याख्या सामान्य नियम के रूप में नहीं की जाती है।

> '... यदि क़ानून के अधिनियमित भाग की भाषा में वे प्रावधान नहीं हैं जो उसमें होने के लिए कहा गया है, तो आप इन प्रावधानों को किसी प्रावधान से निहितार्थ द्वारा प्राप्त नहीं कर सकते हैं',

लॉर्ड वॉटसन ने वेस्ट डर्बी यूनियन बनाम मेट्रोपॉलिटन लाइफ एश्योरेंस सोसायटी 1897 एसी 647 (एचएल), एसी पी. 653 में कहा। आम तौर पर, कोई प्रावधान उस प्रावधान से आगे नहीं बढ़ता है जिसके लिए वह प्रावधान है। यह उस मुख्य प्रावधान के लिए अपवाद बनाता है जिसके लिए इसे प्रावधान के रूप में अधिनियमित किया गया है और किसी अन्य के लिए नहीं। [देखें ए.एन. सहगल बनाम राजे राम श्योराण 1992 सप (1) एससीसी 304:

1993 एससीसी (एलएंडएस) 675], त्रिभुवनदास हरिभाई तंबोली बनाम गुजरात

राजस्व न्यायाधिकरण (1991) 3 एससीसी 442] और केरल राज्य आवास बोर्ड बनाम

रामप्रिया होटल्स (पी) लिमिटेड [केरल राज्य आवास बोर्ड बनाम रामप्रिया

होटल्स (पी) लिमिटेड (1994) 5 एससीसी 672]

'यह शब्द (परंतु) विविध कार्य करता है। कभी यह

योग्यता या सीमा का काम करता है; कभी यह एक शर्त का काम करता है; और कभी-कभी एक अनुबंध।' (कॉक अपॉन लिटलटन, 18वां संस्करण, पृ. 146.)

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

'यदि किसी विलेख में पहले वाले खंड के बाद बाद वाला खंड आता है जो पहले वाले खंड द्वारा बनाए गए दायित्व को पूरी तरह से नष्ट कर देता है, तो बाद वाले खंड को प्रतिकूल मानकर खारिज कर दिया जाना चाहिए और पहले वाला खंड मान्य रहेगा। ... लेकिन यदि बाद वाला खंड नष्ट नहीं करता है बल्कि पहले वाले को केवल योग्य बनाता है, तो दोनों को एक साथ पढ़ा जाना चाहिए और पार्टियों के इरादे को प्रभाव दिया जाना चाहिए जैसा कि विलेख द्वारा समग्र रूप से प्रकट किया गया है' (फोर्ब्स बनाम गिट (1921 एससीसी ऑनलाइन पीसी 102: (1922) 1 एसी 256) में लॉर्ड रेनबरी के अनुसार।

एक वैधानिक प्रावधान 'किसी पूर्ववर्ती अधिनियम पर आरोपित कुछ है' (आर. वी. टॉन्टन सेंट जेम्स (1829) 9 बी एंड सी 831: 109 ईआर 309,
ईआर पृष्ठ 311)।

'सामान्य अधिनियम के बाद आने वाले प्रावधान का सामान्य और उचित कार्य कुछ मामलों में उस सामान्य अधिनियम को सीमित करना है' (बार्कर में लॉर्ड एशर के अनुसार, इन रे, एक्स पी कांस्टेबल (1890) एलआर 25 क्यूबीडी 285 (सीए)।

x x x x x

11. उपरोक्त स्थिति अली एम.के. बनाम केरल राज्य (2003) 11 एससीसी 632: 2004 एससीसी (एल एंड एस) 136 में नोट की गई थी।

18. रोमेश कुमार शर्मा बनाम भारत संघ (2006) 6 एससीसी 510: 2006 एससीसी (एल एंड एस) 1430 में, इस न्यायालय ने देखा है कि सामान्य रूप से प्रावधान उन प्रावधानों से आगे नहीं जाता है जिनके लिए यह प्रावधान है। इस न्यायालय ने माना: (एससीसी पीपी 514-15, पैरा 12)

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

“12. ‘10. प्रावधान का सामान्य कार्य अधिनियम से कुछ को बाहर करना या उसमें अधिनियमित किसी चीज़ को योग्य बनाना है जो प्रावधान के बिना अधिनियम के दायरे में आता। जैसा कि मुलिंस बनाम ट्रेजरर ऑफ़ सरे (1880) एलआर 5 क्यूबीडी 170 पृष्ठ पर कहा गया था। 173 (डीसी)

(शाह भोजराज कुवेरजी ऑयल मिल्स एंड जिनिंग फैक्ट्री बनाम सुभाष चंद्र योगराज सिन्हा (एआईआर 1961 एससी 1596) और कलकत्ता ट्रामवेज कंपनी लिमिटेड बनाम कलकत्ता कॉरपोरेशन (एआईआर 1965 एससी 1728) में संदर्भित), जब कोई किसी धारा में प्रावधान पाता है तो स्वाभाविक अनुमान यह है कि प्रावधान के बिना, धारा के अधिनियमित भाग में प्रावधान की विषय-वस्तु शामिल होगी। प्रावधान का उचित कार्य अपवाद करना और उस मामले से निपटना है जो अन्यथा मुख्य अधिनियम की सामान्य भाषा के अंतर्गत आता है और इसका प्रभाव उस मामले तक ही सीमित है। यह पिछले अधिनियम की एक योग्यता है जिसे बहुत सामान्य शब्दों में व्यक्त किया गया है जो बिल्कुल सटीक नहीं है। एक सामान्य नियम के रूप में, किसी अधिनियम में प्रावधान जोड़ा जाता है ताकि अधिनियम में जो कुछ है उसके लिए एक अपवाद बनाया जा सके और

आमतौर पर, किसी प्रावधान की व्याख्या सामान्य नियम के रूप में नहीं की जाती है।

> "... यदि क़ानून के अधिनियमित भाग की भाषा में वे प्रावधान नहीं हैं जो इसमें होने के लिए कहा गया है, तो आप इन प्रावधानों को किसी प्रावधान से निहितार्थ द्वारा प्राप्त नहीं कर सकते",

लॉर्ड वॉटसन ने वेस्ट डर्बी यूनियन बनाम मेट्रोपॉलिटन लाइफ एश्योरेंस सोसाइटी 1897 एसी 647 (एचएल), एसी पी. 652 में कहा। आम तौर पर, कोई प्रावधान उस प्रावधान से आगे नहीं बढ़ता है जिसके लिए वह प्रावधान है। यह उस मुख्य प्रावधान के लिए अपवाद बनाता है जिसके लिए इसे प्रावधान के रूप में अधिनियमित किया गया है और किसी अन्य के लिए नहीं। [देखें ए.एन. सहगल बनाम राजे राम श्योराण, 1992 सप (1) एससीसी 304: 1993 एससीसी (एलएंडएस) 675, त्रिभुवनदास हरिभाई तंबोली बनाम गुजरात राजस्व न्यायाधिकरण, (1991) 3

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

एससीसी 442 और केरल राज्य आवास बोर्ड बनाम रामप्रिया होटल्स (पी) लिमिटेड (1994) 5 एससीसी 672।

"यह शब्द (परंतु) विविध कार्य करता है। कभी-कभी यह एक योग्यता या सीमा का काम करता है; कभी-कभी एक शर्त; और कभी-कभी एक वाचा।" (कॉक अपॉन लिटलटन, 18वां संस्करण, पृष्ठ 146)

"यदि किसी विलेख में पहले वाले खंड के बाद बाद वाला खंड आता है जो पहले वाले खंड द्वारा बनाए गए दायित्व को पूरी तरह से नष्ट कर देता है, तो बाद वाले खंड को प्रतिकूल मानकर खारिज कर दिया जाना चाहिए, और पहले वाला खंड मान्य होगा। ... लेकिन यदि बाद वाला खंड पहले वाले को नष्ट नहीं करता बल्कि केवल योग्य बनाता है, तो दोनों को एक साथ पढ़ा जाना चाहिए और पार्टियों के इरादे को प्रभाव दिया जाना चाहिए जैसा कि पूरे विलेख द्वारा प्रकट किया गया है। (फोर्ब्स बनाम गिट में लॉर्ड रेनबरी के अनुसार
1921 एससीसी ऑनलाइन पीसी 102: (1922) 1 एसी 256.

11. एक वैधानिक प्रावधान "एक पूर्ववर्ती अधिनियम पर आरोपित कुछ है"
(आर. बनाम टॉन्टन सेंट जेम्स (1829) 9 बीएंडसी 831: 109 ईआर 309, ईआर पी. 311)।

"एक सामान्य अधिनियम के बाद आने वाले प्रावधान का सामान्य और उचित कार्य कुछ मामलों में उस सामान्य अधिनियम को सीमित करना है।" (बार्कर में लॉर्ड एशर के अनुसार, इन रे, एक्स पी कांस्टेबल, (1890) एलआर 25 क्यूबीडी 285 (सीए),
एलआर पी. 292.)

12. किसी धारा के परंतुक का उपयोग अधिनियमित भाग में ऐसी कोई चीज़ शामिल करने के लिए नहीं किया जा सकता जो वहाँ है ही नहीं, लेकिन जहाँ अधिनियमित भाग कई संभावित अर्थों के लिए अतिसंवेदनशील है, उसे परंतुक द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है (देखें जेनिंग्स बनाम केली 1940 एसी 206 (एचएल)।' (अली एम.के. मामला [अली एम.के. बनाम केरल राज्य,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

(2003) 11 एससीसी 632: 2004 एससीसी (एलएंडएस) 136, एससीसी पृ. 637-39, पैरा 10-12)"

19. नगर पालिका निगम बनाम कृषि उपज मंडी समिति (2008) 12 एससीसी 364: एआईआर 2009 एससी 187 में, इस न्यायालय ने इस प्रकार अवलोकन किया है: (एससीसी पृ. 368, पैरा 9)

"9. '10. एक नगरपालिका का सामान्य कार्य परंतुक का अर्थ है अधिनियम से कुछ को बाहर रखना या उसमें अधिनियमित किसी ऐसी चीज को योग्य बनाना जो परंतुक के बिना अधिनियम के दायरे में आती। जैसा कि मुलिंस बनाम ट्रेजरर ऑफ सरे (1880) एलआर 5 क्यूबीडी 170 पृष्ठ 173 (डीसी) में कहा गया था (शाह भोजराज कुवेर्जी ऑयल मिल्स एंड जिनिंग फैक्ट्री बनाम सुभाष चंद्र योगराज सिन्हा (एआईआर 1961 एससी 1596) और कलकत्ता ट्रामवेज कंपनी लिमिटेड बनाम कॉरपोरेशन ऑफ कलकत्ता (एआईआर 1965 एससी 1728) में संदर्भित); जब कोई किसी धारा में परंतुक पाता है तो स्वाभाविक धारणा यह होती है कि परंतुक के बिना धारा के अधिनियमित भाग में परंतुक की विषय-वस्तु शामिल होती। परंतुक का उचित कार्य अपवाद देना और ऐसे मामले से निपटना है जो अन्यथा मुख्य अधिनियम की सामान्य भाषा में आता है और इसका प्रभाव उस मामले तक ही सीमित है। यह पिछले अधिनियम की एक योग्यता है जिसे बहुत सामान्य शब्दों में व्यक्त किया जाता है जो बिल्कुल सटीक नहीं है। एक सामान्य नियम के रूप में, अधिनियम में जो कुछ है उसके लिए एक अपवाद बनाने या उसे योग्य बनाने के लिए एक परंतुक को अधिनियम में जोड़ा जाता है और आमतौर पर, एक परंतुक की व्याख्या एक सामान्य नियम के रूप में नहीं की जाती है।

> '... यदि क़ानून के अधिनियमित भाग की भाषा में वे प्रावधान नहीं हैं जो इसमें होने के लिए कहा गया है, तो आप इन प्रावधानों को किसी प्रावधान से निहितार्थ द्वारा प्राप्त नहीं कर सकते हैं',

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

लॉर्ड वॉटसन ने वेस्ट डर्बी यूनियन बनाम मेट्रोपॉलिटन लाइफ एश्योरेंस सोसायटी 1897 एसी 647 (एचएल) (एसी पी. 652) में कहा। आम तौर पर, कोई प्रावधान उस प्रावधान से आगे नहीं बढ़ता है जिसके लिए वह प्रावधान है। यह उस मुख्य प्रावधान के लिए अपवाद बनाता है जिसके लिए इसे प्रावधान के रूप में अधिनियमित किया गया है और किसी अन्य के लिए नहीं। [देखें ए.एन. सहगल बनाम राजे राम श्योराण 1992 सप्प (1) एससीसी 304: 1993 एससीसी (एल एंड एस) 675, त्रिभोवनदास हरिभाई तम्बोली बनाम गुजरात राजस्व न्यायाधिकरण (1991) 3 एससीसी 442 और केरल राज्य हाउसिंग बोर्ड बनाम रामप्रिया होटल्स (पी) लिमिटेड (1994) 5 एससीसी 672 संस्करण: जैसा कि मौलवी हुसैन हाजी अब्राहम उमरजी बनाम में देखा गया है गुजरात राज्य, (2004) 6 एससीसी 672, पृ. 679, पैरा 10.

20. शिंभू बनाम हरियाणा राज्य (2014) 13 एससीसी 318: (2014) 5 एससीसी (क्रि) 651 में, इस न्यायालय ने माना है कि निर्माण का मूल नियम यह है कि किसी प्रावधान को उस मुख्य प्रावधान का हिस्सा माना जाना चाहिए जिसके लिए वह प्रावधान के रूप में खड़ा है। इस न्यायालय ने कहा: (एससीसी पृष्ठ 324-25, पैरा 13)

"13. निर्माण का यह मूल नियम है कि किसी प्रावधान को उस मुख्य प्रावधान के संबंध में माना जाना चाहिए जिसके लिए वह प्रावधान के रूप में खड़ा है, विशेष रूप से, ऐसे दंडात्मक प्रावधानों में। कोई "विशेष और पर्याप्त कारण" मौजूद है या नहीं, यह विभिन्न कारकों और प्रत्येक मामले के अजीबोगरीब तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। यह न्यायालय, विभिन्न निर्णयों में, इस आम सहमति पर पहुंचा है कि सार्वभौमिक आवेदन के लिए इस संबंध में कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता है।

" 21. उपर्युक्त कथन से यह निष्कर्ष निकलता है कि परंतुक का प्रभाव अधिनियम के सभी पूर्ववर्ती भाग को छोड़ना है। कभी-कभी ऐसा होता है कि परंतुक पूर्ववर्ती धारा की विषय-वस्तु से असंबंधित होता है, इसे मूल प्रावधान के रूप में व्याख्यायित किया जा सकता है। आमतौर पर, परंतुक की व्याख्या सामान्य नियम के रूप में नहीं की जाती है। परंतुकों को अक्सर बचत खंडों के रूप में जोड़ा जाता है। परंतुक की व्याख्या उस खंड के पूर्ववर्ती भागों के संदर्भ में की जानी

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

चाहिए, जिसके साथ इसे जोड़ा गया है। परंतुक आमतौर पर मुख्य धारा के अधीन होता है। परंतुक पर रखा गया निर्माण जो धारा की शर्तों में सामान्य सामंजस्य लाता है, उसे लागू किया जाना चाहिए। परंतुक में कभी-कभी मूल प्रावधान हो सकता है। आमतौर पर, किसी धारा के परंतुक का उद्देश्य मुख्य धारा के एक भाग को विशेष उपचार के लिए निकालना होता है। सामान्यतः, कोई प्रावधान उस मुख्य प्रावधान से आगे नहीं जाता जिसके लिए वह प्रावधान है। प्रावधान की व्याख्या सामान्य नियम के रूप में नहीं की जाती है, यह उस मुख्य प्रावधान का अपवाद है जिसके लिए इसे प्रावधान के रूप में बनाया गया है। प्रावधान को अधिनियम के दायरे को बढ़ाने के रूप में नहीं समझा जा सकता है जब इसे उस प्रभाव को बताए बिना निष्पक्ष और उचित रूप से बनाया जा सकता है। अधिनियम के उन शब्दों को पढ़ना खुला नहीं है जो उसमें नहीं पाए जाते हैं और जो इसके परिचालन प्रभाव को बदल देंगे।"

46. याचिकाकर्ताओं ने अपने तर्क के समर्थन में वर्ष 1986 में प्रकाशित उत्तर प्रदेश जिला गजेटियर, इलाहाबाद और उसमें वर्णित जिले के सामान्य भौगोलिक और ऐतिहासिक विवरण पर भी भरोसा करने की मांग की है। गजेटियर में दिया गया संक्षिप्त ऐतिहासिक विवरण, जो वर्तमान मामले के तथ्यों में प्रासंगिक होगा, नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

"अध्याय दो

इतिहास

गंगा और यमुना (जिनका उल्लेख कालिदास ने अपने प्रसिद्ध काव्य रघुवंश में क्रमशः धवल एवं श्याम रंग की जल धाराओं के रूप में किया है) तथा परम्परागत सरस्वती, जिसकी धारा अदृश्य है, के संगम पर स्थित प्रयाग (इलाहाबाद) बहुत प्राचीन काल से ही हिन्दुओं का एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण पवित्र तीर्थ रहा है। इस स्थान का उल्लेख महाकाव्यों, पुराणों एवं अन्य कृतियों में आया है। मनु-स्मृति के अनुसार विनशन से प्रयाग तक विस्तृत भूभाग मध्यदेश में सम्मिलित था। लिंग पुराण के अनुसार, चन्द्रवंश के पूर्व पुरुष पुरूरवा ऐल (मनु वैवस्वत के पौत्र) ने यमुना के उत्तरी संभाग में शासन

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

Translated Version: Not for Legal Use

किया था जिसकी राजधानी प्रतिष्ठान (आधुनिक झूसी) थी जो गंगा के किनारे (इलाहाबाद नगर के दूसरी ओर) स्थित थी। वनवास के लिए अयोध्या से प्रस्थान करते समय राम पहले गंगा की ओर बढ़े जिसके किनारे, निषादों के राजा गुह का राज्य था और उसकी राजधानी श्रृंगवेरपुर (आधुनिक सिंगरौर जो परगना सोरांव में स्थित है) थी। इसके पश्चात् उन्होने गंगा को पार किया और प्रयाग पहुंचे, जहां ऋषि भरद्वाज का आश्रम था। राम से मिलने के लिए जाते समय उनके भाई भरत भी यहां रूके थे। कूर्मपुराण के अनुसार, प्रयाग मंडल पांच योजन (लगभग 40 कि०मी०) तक फैला हुआ था। और मत्स्य पुराण के वर्णन के अनुसार इसका विस्तार प्रतिष्ठान से वासुकि सरोवर तथा नागों (कम्बल, अश्वतर और बाहुमूलक) के निवास स्थान तक था किन्तु साक्ष्य के अभाव में ये स्थान अज्ञात रह गये है।

ब्राह्मण एवं बौद्ध साहित्य में उल्लिखित विवरणों के अनुसार प्रयाग का सम्बन्ध कुछ पौराणिक विभूतियों से भी रहा है। महाभारत के अनुसार सृष्टि के देवता ब्रह्मा ने यहां पर यज्ञ किया था जिससे इस स्थान का नाम प्रयाग पडा. (प्र शब्द उत्तम और 'याग शब्द यज्ञ का द्योतक है)। इसे भास्कर क्षेत्र भी कहा जाता था और सोम, वरुण एवं प्रजापति का जन्म यहीं पर हुआ था। 'दीपवंस' तथा 'महावंस (लका के बौद्ध इतिहास) से यह ज्ञात होता है कि प्रयाग में ही भइयाजी द्वारा पूर्वकालीन राजा महापणदास का जलमग्न महल पानी से ऊपर उठाया गया था। विनय पिटक में यह उल्लेख आया है कि गौतम बुद्ध ने प्रयाग से होकर प्रस्थान किया था। जिले के कतिपय प्राचीन स्थानों से प्राप्त मिट्टी के बर्तनों के प्राचीन टुकड़ों से यह संकेत मिलता है कि ईसा संवत प्रारम्भ होने के शताब्दियों पूर्व से ही इस क्षेत्र में मानव बस्तियां विद्यमान थी।

अध्याय उन्नीस

महत्वपूर्ण स्थान

इलाहाबाद (परगना और तहसील चायल)

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

इलाहाबाद नगर जिसमें इलाहाबाद नगर महापालिका तथा छावनी का क्षेत्र सम्मिलित है, 25° 26' अक्षांश उत्तर तथा 81°50′ देशान्तर पूर्व में समुद्र तल से 103.63 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। यह नगर कलकत्ता से लगभग 908 कि०मी० उत्तर-पश्चिम में, लखनऊ से लगभग 202 कि०मी० दक्षिण-पूर्व, बम्बई से लगभग 1358 कि०मी० उत्तर-पूर्व तथा दिल्ली से 663 कि०मी० की दूरी पर स्थित है। गंगा और यमुना नदियां इसके ऐतिहासिक किले के पास ही मिलती है तथा पौराणिक और प्रचलित विश्वास के अनुसार सरस्वती नामक एक गुप्त धारा भी यहीं पर इन नदियों में मिलती है। इस स्थल को त्रिवेणी (तीन धाराओं का संगम) कहते है।

इस स्थान का प्राचीन नाम प्रयाग है जिसका उल्लेख रामायण और पुराणों में आया है तथा नगर में अब भी इसी नाम से एक रेलवे स्टेशन है। अतीतकाल से ही इसे एक प्रवित्र तीर्थ स्थान माना जाता रहा है। गंगा और यमुना के संगम के पास ही एक ऊंचा टीला है यहीं पर भरद्वाज ऋषि के आश्रम में (राम के भाई) भरत उस समय उनके अतिथि बने थे जब वह राम के वन चले जाने पर उन्हे ढूंढ़ते हुये यहां आये थे। कहा जाता है कि यहीं पर ब्रहमा ने देवों में सर्व प्रमुख होने के प्रतीक स्वरूप एक यज्ञ किया था और यहीं पर उन्होने शंखासुर से चारों वेदों की पुनः प्राप्ति के उपलक्ष्य में उत्सव मनाया था। अपनी धार्मिक पवित्रता के कारण यह नगर अतीत काल से तीर्थराज (अर्थात सभी तीर्थस्थानों का राजा) के नाम से विख्यात है। गौतम बुद्ध के समय में यह वत्स राज्य का अंग था और चन्द्र गुप्त मौर्य (321-297 ई० पू०) के विशाल साम्राज्य में इसको एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। अशोक के बाद इस स्थान के इतिहास के बारे में बहुत कम जानकारी है सिवाय इसके कि यह नगर कुषाण साम्राज्य की पूर्वी सीमा पर स्थित था तथा समुद्रगुप्त के राज्य का पश्चिमी अंग था। चीनी यात्री फाह्यान गुप्त सम्राट चन्द्रगुप्त द्वितीय (376-414 ई०) के शासनकाल में प्रयाग आया था। उसने प्रयाग को एक समृद्ध तथा घनी जनसंख्या वाला नगर पाया। हर्ष (606-647 ई०) के शासनकाल में यह एक महान् नगर था जहां पर वह प्रत्येक पांचवे वर्ष एक महासभा आयोजित करता था और गरीबों तथा धार्मिक व्यक्तियों (जिनमें बौद्ध भिक्षु तथा जैन

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

सम्मिलित थे) में अपना कोष बांट देता था। डेनसांग भी एक चीनी यात्री था जो हर्ष के शासन काल में प्रयाग आया था, उसने लिखा है कि यह कौशाम्बी से बड़ा नगर है तथा यहां पर 50 समृद्धशाली हिन्दू मन्दिर (पातालपुरी को सम्मिलित करते हुये जो शहर के बीच में है) तथा 82 बौद्ध मठ है। हर्ष की मृत्यु के पश्चात इस स्थान का महत्व घट गया और मुसलमानों की विजय के उपरान्त यह एक साधारण स्थान रह गया। किन्तु अकबर के शासनकाल में इसे पुनः महत्व प्राप्त हुआ जब उसने यहां एक शाही नगर की स्थापना की और उसका नाम इलाहावास अथवा इलाहाबाद रखा तथा गंगा और यमुना के संगम के निकट एक किला भी बनवाया। यह नगर इलाहाबाद सूबे की राजधानी बना तथा इसके महत्य और आकार में भी वृद्धि हुई।"

47. यह मुद्दा कि क्या गजेटियर पर इतिहास के स्रोत के रूप में भरोसा किया जा सकता है, **महंत श्री श्रीनिवास रामानुज दास बनाम सुरजनारायण दास एवं अन्य** में सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष आया और इस पर निम्न प्रकार से निर्णय दिया गया:-

"26. अपीलकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया है कि गजेटियर में जो कुछ कहा गया है, उसे साक्ष्य के रूप में नहीं माना जा सकता। गजेटियर में दिए गए इन कथनों पर शीर्षक के साक्ष्य के रूप में नहीं, बल्कि मठ और उसके प्रमुख द्वारा अपनाई गई ऐतिहासिक सामग्री और व्यवहार के रूप में भरोसा किया जाता है। सार्वजनिक इतिहास के मामलों में गजेटियर से परामर्श किया जा सकता है।"

48. **सुखदेव सिंह बनाम महाराजा बहादुर ऑफ गिधौर** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जिला गजेटियर की उपयोगिता को एक आधिकारिक दस्तावेज के रूप में रेखांकित किया गया था, जहां इस पर निम्न प्रकार से निर्णय दिया गया:-

"10. ... जिला गजेटियर में दिया गया कथन आवश्यक रूप से निर्णायक नहीं है, लेकिन गजेटियर कुछ मूल्य का एक आधिकारिक दस्तावेज है, क्योंकि इसे अनुभवी अधिकारियों

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

द्वारा आधिकारिक अभिलेखों से तथ्य प्राप्त करने के बाद बहुत सावधानी से संकलित किया जाता है।"

49. **लालू डोम एवं अन्य बनाम बिजॉय चंद महातप** में भी गजेटियर की सामग्री पर इस विषय पर एक प्राधिकार के रूप में भरोसा किया गया था, जिसमें यह माना गया था:-

"…..लेकिन हमारे पास बांकुरा के बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेटियर का अधिकार है कि "थाना इंदास और कोटलपुर में, सीमानदार नामक लोगों का एक समूह है, जो चौकीदारों के कर्तव्यों का पालन करते हैं। उन्हें मजदूरी के बदले में भूमि का अनुदान मिलता है; लेकिन कुछ मामलों में इन सेवा भूमि को 1870 के अधिनियम VI के तहत फिर से हासिल कर लिया गया है"

हम इस संदर्भ पुस्तक का उपयोग यह देखने के लिए करने के हकदार हैं कि सीमानदारों के कर्तव्य क्या हैं, यानी क्या उनके कर्तव्य चौकीदारी चक्र भूमि अधिनियम की धारा । में दिए गए विवरणों के अनुरूप हैं।"

50. उपरोक्त के आलोक में जिला गजेटियर पर कुछ ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध कराने के रूप में भरोसा किया जा सकता है, और यह ध्यान देने योग्य है कि इलाहाबाद जिले के इतिहास का अवलोकन करते हुए, प्राचीन साहित्यिक और ऐतिहासिक स्रोतों पर भरोसा करके प्राचीन काल से सांस्कृतिक महत्व के स्थल के रूप में “प्रयाग” के अस्तित्व का संदर्भ दिया गया है। यह भी कहा गया है कि प्राचीन भारतीय साहित्य में “प्रयाग” नामक स्थल के अस्तित्व का लगातार उल्लेख किया गया है। गजेटियर में वर्णित ऐतिहासिक विवरण में यह वर्णन मिलता है कि “प्रयाग” का प्राचीन स्थल गौतम बुद्ध के काल में अस्तित्व में था। इसके अलावा, गजेटियर इस स्थल का उल्लेख मौर्य राजवंश और गुप्त राजवंश के नियंत्रण वाले क्षेत्र का हिस्सा होने के साथ-साथ यह भी बताता है कि इस स्थान का वर्णन चीनी यात्री फाहयान के यात्रा वृत्तांत में मिलता है, जो चंद्रगुप्त-द्वितीय के शासनकाल के दौरान भारत आया था। आगे इस तथ्य का संदर्भ दिया गया है कि हर्ष के शासनकाल (606-647 ई.) के दौरान एक आवधिक सभा आयोजित की गई थी और इस संबंध में विवरण चीनी यात्री ह्वेन त्सांग के यात्रा वृत्तांत में मिलता है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

51. याचिकाकर्ताओं ने कुछ साहित्यिक और ऐतिहासिक स्रोतों से उद्धरण भी रिकॉर्ड पर रखे हैं, जिनका हम अब उल्लेख करेंगे। मौलवी सैय्यद मकबूल अहमद समदानी द्वारा लिखित "तारीख-ए-इलाहाबाद" खंड I, (1938) से कुछ उद्धरण, जो स्टार प्रेस, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित है, रिकॉर्ड पर हैं, जिसमें यह कहा गया है कि "इलाहाबाद" प्रांत के भीतर "इलाहाबाद" नाम से स्थान का पुराना नाम "प्रयाग" था। यह भी कहा गया है कि इलाहाबाद नाम सम्राट अकबर के शासनकाल के दौरान प्रसिद्ध हुआ। इसके अलावा, इस स्थान की भौगोलिक स्थिति को गंगा, यमुना और सरस्वती नदियों के संगम पर स्थित होने के रूप में पहचाना जाता है।

52. राष्ट्रीय उर्दू भाषा संवर्धन परिषद, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा वर्ष 2008 में प्रकाशित मुल्ला अब्दुल कादिर बदायुनी द्वारा लिखित "मुन्तख़ाब-उत-तवारीख" (चयनित इतिहास), खंड II नामक एक अन्य पुस्तक से संदर्भ लिया गया है, तथा जो अंश उद्धृत किया गया है, उसमें उल्लेख है कि इलाहाबाद या प्रयाग गंगा और यमुना नदियों के संगम स्थल पर स्थित था।

53. इसके अतिरिक्त, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा प्रकाशित डॉ. राजबली पांडे द्वारा लिखित "हिंदू धर्मकोश" ग्रन्थ का संदर्भ लिया गया है तथा निम्नलिखित अंश अभिलेख में रखे गए हैं:-

> "...प्रयाग शब्द की व्युत्पत्ति वनपर्व (87.18.19) में से मानी गयी है। उसके यज् धातु अनुसार सर्वात्मा ब्रह्मा ने सर्वप्रथम यहां यजन किया था (आहुति दी थी) इसलिए इसका नाम प्रयाग पड़ गया। पुराणों में प्रयागमण्डल, प्रयाग और वेणी अथवा त्रिवेणी वेवेणी की विविध व्याख्याएँ की गयी है। मत्स्य तथा पद्मपुराण के अनुसार प्रयागमण्डल पाँच योजन की परिधि में है और उसमें प्रविष्ट होने विस्तृत पर एक-एक पद पर अश्वमेघ यज्ञ का पुण्य मिलता है। प्रयाग की सीमा प्रतिष्ठान (झेंसी) से वासुकिसेतु तक तथा कंबल और अश्वतर नागों तक स्थित है। यह तीनों लोकों में प्रजापति की पुण्यस्थली के नाम से विख्यात है। पद्मपुराण (1.43-27) के अंनुसार वेणी क्षेत्र प्रयाग की सीमा में 20 धनुष तक की दूरी में विस्तृत है। वहाँ प्रयाग, प्रतिष्ठान (झूसी) तथा अलर्कपुर (अरैल) नाम के

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

तीन कूप है। मत्स्य (110.4) और अग्नि (111.12) पुराणों के अनुसार वहाँ तीन अग्नि कुण्ड भी हैं जिनके मध्य से होकर गङ्गा बहती है। वनपर्व (85.81 और 85) तथा मत्स्य० (104.16-17) में बताया गया है कि प्रयाग में नित्य स्नान को वेणी अर्थात दो नदियों (गङ्गा और यमुना) का संगम स्नान कहते है। वनपर्व (85.75) तथा अन्य पुराणों में गङ्गा और यमुना के मध्य की भूमि को पृथ्वी का जघन या कटिप्रदेश कहा गया है। इसका तात्पर्य है पृथ्वी का सबसे अधिक समृद्ध प्रदेश अथवा मध्य भाग।

गङ्गा, यमुना और सरस्वती के त्रिवेणीसंगम को ऑकार' नाम से अभिहित किया गया है। 'ओंकार का 'ओम' परब्रह्मा परमेश्वर की ओ रहस्यात्मक संकेत करता है। यही सर्वसुखप्रदायिनी त्रिवेणी का सूचक है। ओंकार का अकार सरस्वती का प्रतीक, उकार यमुना का प्रतीक तथा मकार गङ्गा का प्रतीक है। तीनों क्रमशः प्रद्युम्न, अनरुिद्ध तथा संकषर्ण (हरि के व्यूह) को उद्भूत करने वाली है। इस प्रकार इन तीनों का संगम त्रिवेणी नाम से विख्यात है (त्रिस्थलीसेतु, पृष्ठ ४)।

नरसिंहपुराण (65.17) में विष्णु को प्रयाग में योगमूर्ति के रूप में स्थित बताया गया है। मत्स्यपुराण (111.4-10) के अनुसार रूद्र द्वारा एक कल्प के उपरान्त प्रलय करने पर भी प्रयाग नष्ट नहीं होता। उस समय प्रतिष्ठान के उत्तरी भाग में ब्रह्मा छड़ा वेश में, विष्णु वेणीमाधव रूप में तथा शिव वटवृक्ष के रूप में आवास करते है और सभी देव, गंधर्व, सिद्ध तथा ऋषि पाप शक्तियों से प्रयागमण्डल की रक्षा करते है। इसीलिए मत्स्यपुराण (10.4.18) में तीर्थयात्री को प्रयाग जाकर एक मास निवास करने तथा संयमपूर्वक देवताओं और पितरों की पूजा करके अभीष्ट फल प्राप्त करने का विधान है।"

54. याचिकाकर्ताओं ने उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ द्वारा प्रकाशित डॉ. पांडुरंग वामन काणे द्वारा लिखित "धर्मशास्त्र का इतिहास" खंड III (मूल पाठ श्री अर्जुन चौबे कश्यप द्वारा मराठी से अनुवादित) के अंश भी अभिलेख में प्रस्तुत किए हैं, जिनमें प्राचीन ग्रंथों में "प्रयाग" नाम के स्थान का उल्लेख निम्नलिखित शब्दों में किया गया है:-

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

"प्रयाग

गंगा-यमुना के संगम से सम्बन्धित अत्यन्त प्राचीन निर्देशों में एक खिल मन्त्र है, जो बहुधा ऋग्वेद (10175) में पढ़ा जाता है और उसका अनुवाद यों है जो लोग श्वेत (सित) या कृष्ण (नील या असित) दो नदियों के मिलन स्थल पर स्नान करते हैं, वे स्वर्ग को उठते (उड़ते) हैं: जो धीर लोग वहाँ अपना शरीर त्याग करते हैं (दूब कर मर जाते है), वे मोक्ष पाते है।" सम्मवतः यह अपेक्षाकृत पश्चात्कालीन मन्त्र है। स्कन्दपुराण ने इसे श्रुति कहा है। महाभारत ने प्रयाग की महत्ता का वर्णन किया है (वन० 85169-97, 87118-20; अनुशासन० 25136-38)। पुराणों में भी इसकी प्रशस्ति गायी गयी है (मत्स्य०, अध्याय 103-112; कूर्म० 1/36-39; पद्म० 1, अध्याय 40-49; स्कन्द०, काशीखण्ड, अध्याय 7145-65)। हम केवल कुछ ही श्लोकों की ओर संकेत कर सकेंगे। यह ज्ञातव्य है कि रामायण ने प्रयाग के विषय में कुछ विशेष नहीं कहा है। संगम का वर्णन आया है. किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उन दिनों वहाँ वन था (रामायण, 2154-6)। प्रयाग को तीर्थराज कहा गया है (मत्स्य० 109 115; स्कन्द० काशीखण्ड, 7145 एवं पद्म०, 6 (23 (27-35, जहाँ प्रत्येक श्लोक के अन्त में 'स तीर्थराजो जयति प्रयागः" आया है)। गाथा यों है कि प्रजापति या पितामह (ब्रह्मा) ने यहाँ यज्ञ किया था प्रयाग ब्रह्मा की वेदियों में बीच वाली वेदी है, अन्य वेदियों हैं उत्तर में कुरुक्षेत्र (जिसे उत्तरवेदी कहा जाता है) एवं पूर्व में गया। ऐसा विश्वास है कि प्रयाग में तीन नदियाँ मिलती हैं, यथा गंगा, यमुना एवं सरस्वती (जो दोनों के बीच में अन्तर्भूमि में है)। मत्स्य, कूर्म आदि पुराणों में ऐसा कहा गया है कि प्रयाग के दर्शन, नाम लेने या इसकी मिट्टी लगाने मात्र से मनुष्य पापमुक्त हो जाता है। कुर्म० ने घोषणा की है- यह प्रजापति का पवित्र स्थल है. जो वहाँ स्नान करते हैं, वे स्वर्ग जाते है और जो यहाँ मर जाते हैं वे पुनः जन्म नहीं लेते। यही पुनीत स्थल तीर्थराज है; यह केशव को प्रिय है। इसी को त्रिवेणी की संज्ञा मिली है।

प्रयाग शब्द की व्युत्पति कई प्रकार से की गयी है। वनपर्व में आया है कि सभी जीवों के अधीश ब्रह्मा ने यहाँ प्राचीन काल में यज्ञ किया था और इसी से यज् धातु से प्रयाग बना है। स्कन्द० ने इसे प्र एवं याग से युक्त माना है इसलिए कहा जाता है कि यह

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

सभी यज्ञों से उत्तम है, हरि, हर आदि देवों ने इसे प्रयाग' नाम दिया है। मत्स्य० ने प्र उपसर्ग पर बल दिया है और कहा है कि अन्य तीर्थों की तुलना में यह अधिक प्रभावशाली है।

ब्रह्म० का कथन है- प्रकृष्टता के कारण यह प्रयाग है और प्रधानता के कारण यह 'राज' शब्द (तीर्थराज) से युक्त है।

प्रयागमण्डल, प्रयाग' एवं वेणी (या त्रिवेणी) के अन्तर को प्रकट करना चाहिए, जिनमें आगे का प्रत्येक पूर्व वाले से अपेक्षाकृत छोटा किन्तु अधिक पवित्र है। मत्स्य० का कथन है कि प्रयाग का विस्तार परिधि में पाँच योजनं है और ज्यों ही कोई उस भूमिखण्ड में प्रविष्ट होता है, उसके प्रत्येक पद पर अश्वमेध का फल होता है। त्रिस्थलीसेतु (पृ० 15) में इसकी व्याख्या यों की गयी है- यदि ब्रह्मयूप (ब्रह्मा के यज्ञस्तम्भ) को खूंटी मानकर कोई डेढ़ योजन रस्सी से चारों ओर मापे तो वह पाँच योजन की परिधि वाला स्थल प्रयागमण्डल होगा। वनपर्व, मत्स्य० (10415 एवं 106(30) आदि ने प्रयाग के क्षेत्रफल की परिभाषा दी है- प्रयाग का विस्तार प्रतिष्ठान से वासुकि के जलाशय तक है और कम्बल नाग एवं अश्वतर नाग तथा बहुमूलक तक है; यह तीन लोकों में प्रजापति के पवित्र स्थल के रूप में विख्यात है। मत्स्य० (106(30) ने कहा है कि गंगा के पूर्व में समुद्रकूप है, जो प्रतिष्ठान ही है। त्रिस्थलीसेतु ने इसे यों व्याख्यात किया है- पूर्व सीमा प्रतिष्ठान का कूप है, उत्तर में वासुकिड्कद्र है, पश्चिम में कम्बल एवं अश्वतर हैं और दक्षिण में बहुमूलक है। इन सीमाओं के भीतर प्रयाग तीर्थ है। मत्स्य० (कल्पतरू, तीर्थ, पृ० 143) के मत से दोनों नाग यमुना के दक्षिणी किनारे पर हैं, किन्तु मुद्रित ग्रन्थ में विपुले यमुनातटें' पाठ है। किन्तु प्रकाशित पद्म० (1143127) से पता चलता है कि कल्पतरू का पाठान्तर (यमुना-दक्षिणे तटे) ठीक है। वेणी क्षेत्र प्रयाग के अन्तर्गत है और विस्तार में 20 बनु है, जैसा कि पद्म० में आया है। यहाँ तीन पवित्र कूप हैं, यथा प्रयाग, प्रतिष्ठानपुर एवं अलर्कपुर में। मत्स्य० एवं अग्नि० का कथन है कि यहाँ तीन अग्निकुण्ड है और गंगा उनके मध्य से बहती है। जहाँ भी कहीं पुराणों में स्नान स्थल का वर्णन

Translated Version: Not for Legal Use

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

(विशिष्ट संकेतों को छोड़कर) आया है, उसका तात्पर्य है वेणी स्थल स्नान और वेणी का तात्पर्ण है दोनों (गंगा एवं यमुना) का संगम । वनपर्व एवं कुछ पुराणों के मत से गंगा एवं यमुना के बीच की भूमि पृथिवी की जाँघ है (अर्थात् यह पृथिवी की अत्यन्त समृद्धिशाली भूमि है) और प्रयाग जघनों की उपस्थ-भूमि है।

नरसिंह० (63117) का कथन है कि प्रयाग में विष्णु योगमूर्ति के रूप में है। मत्स्य० (111(4-10) में आया है कि कल्प के अन्त में जब रूद्र विश्व का नाश कर देते हैं उस समय भी प्रयाग का नाश नहीं होता है। ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश्वर (शिव) प्रयाग में रहते है; प्रतिष्ठान के उत्तर में ब्रह्मा गुप्त रूप में रहते हैं, विष्णु वहाँ वेणीमाधव के रूप में रहते है और शिव वहाँ अक्षयवट के रूप में रहते है। इसी लिए गन्धों के साथ देवगण, सिद्ध लोग एवं बड़े-बड़े ऋषिगण प्रयाग के मण्डल को दुष्ट कर्मो से बचाते रहते है। इसी से मत्स्य० (104118) में आया है कि यात्री को देवरक्षित प्रयाग में जाना चाहिए, वहाँ एक मास ठहरना चाहिए, वहाँ सम्भोग नहीं करना चाहिए, देवों एवं पितरों की पूजा करनी चाहिए और वांछित फल प्राप्त करने चाहिए। इसी पुराण (105116-22) ने यह भी कहा है कि वहाँ दान करना चाहिए, और इसने वस्त्रों, आभूषणों एवं रत्नों से सुशोभित कपिला गाय के दान की प्रशस्ति गायी है। और देखिए पन्द्म० (आदि, 42117-24)। मत्स्य० (10618-9) ने ड्रेयाग में कन्या के आर्य विवाह की बड़ी प्रशंसा की है। मत्स्य० (105113-14) ने सामान्य रूप से कहा है कि यदि कोई गाय, सोना, रत्न, मोती आदि का दान करता है तो उसकी यात्रा सुफल होती है और उसे पुण्य प्राप्त होता है, तथा जब कोई अपनी समर्थता एवं धन के अनुसार दान करता है तो तीर्थयात्रा की फल-वृद्धि होती है, और वह कल्पान्त तक स्वर्ग में रहता है। ब्रह्माण्ड० ने आश्वासन दिया है कि यात्री जो कुछ अपनी योग्यता के अनुसार कुरुक्षेत्र, प्रयाग, गंगा-सागर के संगम, गंगा, पुष्कर सेतुबन्ध, गंगाद्वार एवं नैमिष में देता है उससे अनन्त फल मिलता है। वनपर्व (85|82=83|77) में आया है कि यह ब्रह्मा की यज्ञ-भूमि देवों द्वारा पूजित है और यहाँ पर थोड़ा भी दिया गया दान महान होता है।

Translated Version Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

तीनों नदियों का संगम ओंकार' से सम्बन्धित माना गया है (ओंकार शब्द ब्रा का द्योतक है)। पुराण-वचन ऐसा है कि ओम् के तीन भाग, अर्थात् अ. उ एवं म क्रम से सरस्वती, यमुना एवं गंगा के द्योतक है और तीनों के जल क्रम से प्रद्युम्न, अनिरूद्ध एवं संकर्षण हरि के प्रतीक है।

यह ज्ञातव्य है कि यद्यपि मास्य०, कूर्म० (1137139), पद्म० (आदि, अध्याय 41-49), अग्नि० (111) आदि पुराणों में प्रयाग के विषय में सैकड़ों श्लोक है, किन्तु कल्पतरू (तीर्थ) ने, जो तीर्थ-सम्बन्धी सबसे प्राचीन निबन्ध है, केवल मत्स्य० (10411-13 एवं 16-20; 10511-22 106 11-48: 107 12-21; 108 13-4, 8-17 एवं 23-24, 109 110-12 110 111 11118-10 कुल मिलाकर लगभग 151 श्लोक एवं वनपर्व अध्याय 85179-87 एवं 97) को उद्धृत किया है और कहीं भी व्याख्या या विवेचन के रूप कुछ भी नहीं जोड़ा है। किन्तु अन्य निबन्धों ने पुराणों से खुलकर उद्धरण दिये हैं और कई विषयों पर विशद विवेचन उपस्थित किया है।

55. वाल्मीकि रामायण के अयोध्याकाण्ड अध्याय से कुछ अंश भी अभिलेख में रखे गए हैं, जिनमें वत्सदेश (प्रयाग) का उल्लेख है।

56. उपरोक्त ऐतिहासिक एवं साहित्यिक ग्रंथों का उल्लेख रिट याचिका में किया गया है तथा उनके अंश भी अभिलेख में रखे गए हैं, जिनसे पता चलता है कि प्राचीन साहित्यिक एवं ऐतिहासिक ग्रंथों में गंगा और यमुना नदियों के संगम पर 'प्रयाग' नामक स्थान के अस्तित्व का उल्लेख किया गया है।

57. संदर्भों से यह भी पता चलता है कि यह प्राचीन काल में संस्कृति और तीर्थयात्रा का केंद्र था, और यह मध्यकालीन युग में और हमारे समय तक ऐसा ही रहा। चीनी यात्रियों फाहयान और ह्वेन त्सांग के यात्रा वृत्तांतों में इस स्थल का संदर्भ दिया गया है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

58. याचिकाकर्ताओं ने भारत सरकार के गृह मंत्रालय द्वारा "जिलों और तालुकाओं/तहसीलों के नामों में परिवर्तन" विषय पर जारी दिनांक 27.05.1981 के संचार पर बहुत अधिक भरोसा किया है, जिसकी एक प्रति जनहित याचिका संख्या 4888/2018 (जनक पांडे और अन्य बनाम यूपी राज्य और अन्य) में रिकॉर्ड पर रखी गई है। उपर्युक्त पत्र उप सचिव, भारत सरकार, गृह मंत्रालय, नई दिल्ली द्वारा गांवों, कस्बों के नाम और उनकी प्रक्रिया में परिवर्तन के विषय पर जारी दिनांक 11.09.1953 के पूर्व पत्र का संदर्भ देता है, जिसका उद्धरण नीचे दिया गया है:-

"पत्र संख्या 130/53 सार्वजनिक, दिनांक 11 सितम्बर 1953 की प्रतिलिपि, सरदार फतेह सिंह, उप सचिव, भारत सरकार, गृह मंत्रालय नई दिल्ली 2/11 राज्य सरकार (ए, बी, सी और डी) जम्मू और कश्मीर को छोड़कर।

विषय:- गांवों, कस्बों आदि के नामों में परिवर्तन। प्रक्रिया..।

मुझे यह कहने का निर्देश हुआ है कि गांवों आदि के नाम बदलने के लिए राज्य सरकार से हाल ही में कई अनुरोध प्राप्त हुए हैं। भारत सरकार द्वारा इस प्रश्न की विस्तार से जांच की गई है और उनका मानना है कि गांवों, कस्बों आदि के नामों में परिवर्तन को यथासंभव हतोत्साहित किया जाना चाहिए, जब तक कि इसे उचित ठहराने के लिए कोई बाध्यकारी कारण न हों, तब तक किसी भी परिवर्तन पर सहमति नहीं दी जानी चाहिए; और किसी भी परिवर्तन से पहले सभी प्रस्तावों को गृह मंत्रालय में भारत सरकार को भेजा जाना चाहिए।

2. यह आवश्यक है कि स्थानों के नाम बदलने के मामले में एक समान प्रक्रिया होनी चाहिए और राज्य सरकार को निम्नलिखित व्यापक सिद्धांतों को ध्यान में रखना चाहिए जो गांवों, कस्बों आदि के नामों में परिवर्तन के लिए भारत सरकार को प्रस्ताव देते हैं।

i) जब तक कोई बहुत विशेष कारण न हो, लोगों को जिस नाम से परिचित हो उसे बदलना वांछनीय नहीं है।

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

ii) जहां तक संभव हो ऐतिहासिक संबंध वाले गांवों आदि के नाम नहीं बदले जाने चाहिए।

iii) केवल स्थानीय देशभक्ति या भाषाई कारणों से परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिए, जैसे गांवों आदि का नाम राष्ट्रीय नेताओं के नाम पर केवल उनके प्रति सम्मान दिखाने या स्थानीय लोगों की संतुष्टि के लिए नहीं रखा जाना चाहिए।

भाषा आदि के मामले में भावना।

iv) नामों के चयन में इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि राज्य और आस-पास में उसी नाम का कोई गांव या कस्बा आदि न हो जिससे भ्रम की स्थिति पैदा हो।

v) किसी भी परिवर्तन की संस्तुति करते समय राज्य सरकार को नाम में परिवर्तन प्रस्तावित करने और नया नाम चुनने के लिए विस्तृत कारण प्रस्तुत करने चाहिए।

3. उपरोक्त पैरा 2 में जो कहा गया है उसके बावजूद, यह अत्यंत वांछनीय हो सकता है कि जहां कोई प्राचीन स्थान जीर्ण-शीर्ण हो गया हो और उसके साथ ही पुराना स्थान नाम भी लुप्त हो गया हो, वहां प्राचीन नाम को पुनः स्थापित किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, उज्जैन के पास पुराने देवास राज्य में अब "गंधवल" नामक एक गांव "विक्रमादित्य" के समय में घनी आबादी वाले और समृद्ध एक प्राचीन शहर के खंडहरों पर बनाया गया है और प्राचीन शास्त्रों और अन्य पुस्तकों में इसे "गंधर्वपुरी" कहा गया है। वर्तमान नाम "गंधवल" स्पष्ट रूप से गंधर्वपुरी का अपभ्रंश है। मध्य प्रदेश सरकार जिसके क्षेत्र में अब यह गांव स्थित है, वह प्राचीन नाम को बहाल करने के औचित्य पर विचार कर सकती है।

59. हम देख सकते हैं कि भारत सरकार द्वारा जारी उपर्युक्त पत्र/संचार जो कि गांवों, कस्बों, जिलों और तालुका/तहसीलों के नाम बदलने के विषय पर कुछ दिशा-निर्देश निर्दिष्ट करने वाले कार्यकारी निर्देश की प्रकृति का है, यह भी प्रावधान करता है कि यह अत्यंत वांछनीय हो सकता

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

Translated Version: Not for Legal Use

है कि जहां कोई प्राचीन स्थान क्षय में गिर गया हो और उसके साथ ही पुराने स्थान का नाम भी गायब हो गया हो, वहां प्राचीन नाम को बहाल किया जाना चाहिए।

60. इसके अलावा, यह सामान्य कानून है कि जहां कानून के तहत विशिष्ट प्रावधान हैं, कार्यकारी निर्देशों का कोई अनुप्रयोग नहीं होगा, और वर्तमान मामले में राज्य सरकार को किसी राजस्व क्षेत्र का नाम बदलने के संबंध में संहिता, 2006 की धारा 6 की उपधारा (2) के तहत अधिकार दिया गया है, कार्यकारी निर्देशों पर भरोसा करना स्पष्ट रूप से गलत है, और कानूनी रूप से कायम नहीं रखा जा सकता है। इस संबंध में हम **उड़ीसा राज्य और अन्य बनाम प्रसन्न कुमार साहू** में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले का उल्लेख कर सकते हैं जिसमें यह माना गया था कि संविधान के अनुच्छेद 162 के तहत शक्तियों के संदर्भ में कार्यकारी निर्देश कानून या वैधानिक नियमों को रद्द नहीं कर सकते हैं।

61. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाए गए तर्क के अनुसार राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 और उत्तर प्रदेश पुनर्गठन अधिनियम, 2000 के प्रावधानों के अनुसार राज्य सरकार को जिलों/मंडलों का नाम बदलने का अधिकार नहीं है। हम अधिनियम, 1956 की धारा 13 का संदर्भ ले सकते हैं जो इस प्रकार है:-

> "**13. राज्य सरकारों की शक्तियों की व्यावृत्ति**। इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों की कोई बात राज्य सरकार की, नियत दिन के पश्चात् राज्य के किसी जिले या मंडल का नाम, विस्तार और सीमाओं में परिवर्तन करने की शक्ति को प्रभावित करने वाली नहीं समझी जाएगी।

62. इसी प्रकार अधिनियम, 2000 की धारा 6 में निहित प्रावधान इस प्रकार हैं:-

> 6. **राज्य सरकारों की शक्तियों की व्यावृत्ति**।- इस भाग के पूर्वगामी प्रावधानों की कोई भी बात उत्तर प्रदेश या उत्तरांचल सरकार की, नियत दिन के पश्चात, राज्य के किसी जिले

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

Translated Version: Not for Legal Use

या अन्य प्रादेशिक प्रभाग का नाम, क्षेत्र या सीमाओं में परिवर्तन करने की शक्ति पर प्रभाव डालने वाली नहीं समझी जाएगी।

63. अधिनियम, 1956 की धारा 13 में स्पष्ट शब्दों में प्रावधान है कि भाग II के पूर्वगामी प्रावधानों में से कोई भी बात, जो प्रादेशिक परिवर्तनों और नए राज्यों के गठन के संबंध में है, राज्य सरकार की नियत दिन के बाद राज्य में किसी अन्य जिले या प्रभाग का नाम, विस्तार और सीमाओं को बदलने की शक्ति को प्रभावित करने वाली नहीं समझी जाएगी।

64. इसी प्रकार अधिनियम, 2000 की धारा 6 के अनुसार यह प्रावधान है कि भाग II के पूर्वगामी प्रावधानों में से कोई भी बात, जो उत्तर प्रदेश राज्य के पुनर्गठन के संबंध में है, उत्तर प्रदेश या उत्तरांचल सरकार की नियत दिन के बाद राज्य में किसी जिले या किसी अन्य प्रादेशिक प्रभाग का नाम, क्षेत्र या सीमाओं को बदलने की शक्ति को प्रभावित करने वाली नहीं समझी जाएगी।

65. अधिनियम, 1956 की धारा 13 और अधिनियम, 2000 की धारा 6 दोनों में राज्य सरकार की व्यावृत्ति शक्तियां निहित हैं और राज्य में किसी जिले या अन्य प्रादेशिक प्रभाग का नाम, क्षेत्र या सीमा बदलने की राज्य की शक्ति को स्पष्ट रूप से मान्यता दी गई है।

66. याचिकाकर्ताओं द्वारा उठाए गए तर्क कि अधिनियम, 1956 और अधिनियम, 2000 के तहत राज्य सरकार को जिलों या प्रभागों का नाम बदलने का अधिकार नहीं है, इसलिए स्वीकार नहीं किए जा सकते।

67. जनहित याचिका संख्या 4916/2018 (जावेद मोहम्मद एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य) में इलाहाबाद नगर निगम द्वारा पारित दिनांक 18.08.2018 के प्रस्ताव को रद्द करने की मांग की गई है, जिसमें इलाहाबाद का नाम बदलकर प्रयागराज करने का प्रस्ताव है।

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

68. इस संबंध में संविधान (चौहत्तरवां संशोधन) अधिनियम, 1992 द्वारा सम्मिलित भाग IX-A के प्रावधानों का संदर्भ लेना प्रासंगिक हो सकता है। संदर्भ की आसानी के लिए, अनुच्छेद 243-P और 243-Q नीचे पुन: प्रस्तुत किए गए हैं:-

"243-पी. परिभाषाएँ.- इस भाग में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो,-

(क) "समिति" का अर्थ अनुच्छेद 243-एस के अधीन गठित समिति है;

(ख) "जिला" का अर्थ राज्य का जिला है;

(ग) "महानगरीय क्षेत्र" का अर्थ दस लाख या उससे अधिक जनसंख्या वाला क्षेत्र है, जो एक या अधिक जिलों में समाहित है और जिसमें दो या अधिक नगर पालिकाएँ या पंचायतें या अन्य समीपवर्ती क्षेत्र हैं, जिन्हें राज्यपाल द्वारा सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा इस भाग के प्रयोजनों के लिए महानगरीय क्षेत्र के रूप में निर्दिष्ट किया गया है;

(घ) "नगरपालिका क्षेत्र" का अर्थ नगरपालिका का प्रादेशिक क्षेत्र है, जैसा कि राज्यपाल द्वारा अधिसूचित किया गया है;

(ङ) "नगरपालिका" का अर्थ अनुच्छेद 243-क्यू के अधीन गठित स्वायत्त शासन की संस्था है;

(च) "पंचायत" का अर्थ अनुच्छेद 243-बी के अधीन गठित पंचायत है; (छ) "जनसंख्या" से तात्पर्य पिछली जनगणना में निर्धारित जनसंख्या से है जिसके प्रासंगिक आंकड़े प्रकाशित हो चुके हैं।

243-प्र. नगर पालिकाओं का गठन.--(1) प्रत्येक राज्य में,--

(क) संक्रमणकालीन क्षेत्र, अर्थात् ग्रामीण क्षेत्र से शहरी क्षेत्र में संक्रमणकालीन क्षेत्र के लिए एक नगर पंचायत (चाहे किसी भी नाम से पुकारा जाए) गठित की जाएगी;

(ख) छोटे शहरी क्षेत्र के लिए एक नगर पालिका परिषद्; और

(ग) बड़े शहरी क्षेत्र के लिए एक नगर निगम,

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

इस भाग के उपबंधों के अनुसार:

परन्तु इस खंड के अधीन कोई नगर पालिका ऐसे शहरी क्षेत्र या उसके किसी भाग में गठित नहीं की जा सकेगी जिसे राज्यपाल, क्षेत्र के आकार और उस क्षेत्र में किसी औद्योगिक प्रतिष्ठान द्वारा प्रदान की जा रही या प्रदान किए जाने के लिए प्रस्तावित नगरपालिका सेवाओं और ऐसे अन्य कारकों को ध्यान में रखते हुए, जिन्हें वह उचित समझे, सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा औद्योगिक टाउनशिप के रूप में निर्दिष्ट करे।

(2) इस अनुच्छेद में, "संक्रमण क्षेत्र", "छोटा शहरी क्षेत्र" या "बड़ा शहरी क्षेत्र" से ऐसा क्षेत्र अभिप्रेत है जिसे राज्यपाल उस क्षेत्र की जनसंख्या, उसमें जनसंख्या का घनत्व, स्थानीय प्रशासन के लिए सृजित राजस्व, गैर-कृषि क्रियाकलापों में रोजगार का प्रतिशत, आर्थिक महत्व या ऐसे अन्य कारक जिन्हें वह उचित समझे, को ध्यान में रखते हुए इस भाग के प्रयोजनों के लिए सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा निर्दिष्ट कर सकता है।"

69. अनुच्छेद 243-पी(डी) के अनुसार, "नगरपालिका क्षेत्र" का अर्थ राज्यपाल द्वारा अधिसूचित नगरपालिका का प्रादेशिक क्षेत्र है। इसके अलावा अनुच्छेद 243-पी का खंड (ई) "नगरपालिका" शब्द को अनुच्छेद 243-क्यू के तहत गठित स्वशासन की संस्था के रूप में परिभाषित करता है।

70. अनुच्छेद 243-क्यू में छोटे शहरी क्षेत्र के लिए नगर परिषद, संक्रमणकालीन क्षेत्र, अर्थात् ग्रामीण क्षेत्र से शहरी क्षेत्र में संक्रमणकालीन क्षेत्र के लिए नगर पंचायत (चाहे किसी भी नाम से पुकारा जाए) तथा बड़े शहरी क्षेत्र के लिए नगर निगम के गठन की परिकल्पना की गई है। अनुच्छेद 243-क्यू के खंड (2) में यह प्रावधान है कि "संक्रमणकालीन क्षेत्र", "छोटा शहरी क्षेत्र" या "बड़ा शहरी क्षेत्र" का अर्थ ऐसा क्षेत्र होगा जिसे राज्यपाल उस क्षेत्र की जनसंख्या, उसमें जनसंख्या का घनत्व, स्थानीय प्रशासन के लिए सृजित राजस्व, रोजगार और गैर-कृषि गतिविधियों का प्रतिशत, आर्थिक महत्व या ऐसे अन्य कारकों को ध्यान में रखते हुए सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा निर्दिष्ट कर सकता है।

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

71. इलाहाबाद शहर "एक बड़े शहरी क्षेत्र" के अंतर्गत आता है, और इस "बड़े शहरी क्षेत्र" के लिए एक नगर निगम का गठन किया गया है। ऐसे बड़े शहरी क्षेत्रों पर लागू वैधानिक प्रावधान यूपी नगर निगम अधिनियम, 195919 (यूपी अधिनियम संख्या 2, 1959) के अनुसार हैं। धारा 2 की उपधारा (10) "शहर" शब्द को संविधान के अनुच्छेद 243-क्यू के खंड (2) के तहत अधिसूचित बड़े शहरी क्षेत्र के रूप में परिभाषित करती है, निम्नलिखित शब्दों में:-

> **"2(10).** "शहर" का अर्थ संविधान के अनुच्छेद 243-क्यू के खंड (2) के तहत अधिसूचित बड़े शहरी क्षेत्र से है;"

72. अधिनियम, 1959 की धारा 3 में एक बड़े शहरी क्षेत्र की घोषणा का प्रावधान है, और इसके अनुसार, यह निर्धारित किया गया है कि राज्यपाल द्वारा संविधान के अनुच्छेद 243-क्यू के खंड (2) के तहत अधिसूचना में निर्दिष्ट किसी भी क्षेत्र को बड़े शहरी क्षेत्र के रूप में निर्दिष्ट सीमाओं के साथ, उस नाम से शहर के रूप में जाना जाएगा, जिसे वह निर्दिष्ट कर सकता है। संदर्भ की आसानी के लिए, अधिनियम, 1959 की धारा 3 को नीचे पुन: प्रस्तुत किया जा रहा है: -

> **“3. बड़े शहरी क्षेत्र की घोषणा**। - (1) राज्यपाल द्वारा संविधान के अनुच्छेद 243-क्यू के खंड (2) के तहत अधिसूचना में निर्दिष्ट कोई भी क्षेत्र, जिसमें ऐसी सीमाएं हैं जो एक बड़े शहरी क्षेत्र के रूप में निर्दिष्ट हैं, एक शहर के रूप में जाना जाएगा, ऐसे नाम से जिसे वह निर्दिष्ट कर सकता है। (2) x x x x x”

73. अधिनियम, 1959 की धारा 2(10) के साथ अनुच्छेद 243-क्यू के खंड (2) और धारा 3(1) के अंतर्गत निहित प्रावधानों को संयुक्त रूप से पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि राज्यपाल द्वारा अनुच्छेद 243-क्यू के खंड (2) के अंतर्गत जारी सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा "एक बड़ा शहरी क्षेत्र" के रूप में निर्दिष्ट क्षेत्र, उसमें निर्दिष्ट सीमाओं के साथ, एक शहर के रूप में जाना जाएगा, ऐसे नाम से जिसे राज्यपाल अधिसूचना द्वारा निर्दिष्ट कर सकते हैं। अधिनियम, 1959 के तहत "एक बड़े शहरी क्षेत्र" को "शहर" के रूप में भी नामित करने की शक्ति अधिनियम, 1959 की धारा 3 के तहत स्पष्ट रूप से निहित है। याचिकाकर्ताओं की ओर से यह तर्क दिया

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

Translated Version. Not for Legal Use.

गया कि अधिनियम, 1959 की धारा 3 के तहत "एक बड़े शहरी क्षेत्र" का नाम निर्दिष्ट करने की शक्ति, जिसे "शहर" के रूप में भी जाना जाता है, का नाम बदलने के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है, क्योंकि एक बार शक्ति का प्रयोग करने के बाद वह समाप्त हो जाती है।

74. हमें भय है कि उपर्युक्त तर्क, जिस पर विचार किया जाना है, केवल उत्तर प्रदेश सामान्य खण्ड अधिनियम, 190420 के अन्तर्गत निहित प्रावधानों, विशेषकर धारा 14 और 21 का हवाला देकर खारिज किया जा सकता है। धारा 14 क्रमिक रूप से किसी शक्ति के प्रयोग से सम्बन्धित है और यह प्रावधान करती है कि जहां उत्तर प्रदेश अधिनियम द्वारा कोई शक्ति प्रदान की जाती है, वहां उस शक्ति का प्रयोग समय-समय पर आवश्यकतानुसार किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त धारा 21 में इस आशय का एक नियम निहित है कि अधिसूचना जारी करने की शक्ति में उसे जोड़ने, संशोधित करने, परिवर्तित करने या निरस्त करने की शक्ति भी सम्मिलित है। त्वरित संदर्भ के लिए अधिनियम, 1904 की धारा 14 और 21 को नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

> **"14. राज्य सरकार को प्रदत्त शक्तियाँ समय-समय पर प्रयोग की जा सकेंगी।** - जहाँ किसी उत्तर प्रदेश अधिनियम द्वारा प्रदत्त शक्तियाँ हैं, वहाँ उस शक्ति का प्रयोग समय-समय पर आवश्यकतानुसार किया जा सकेगा।
>
> x x x x x
>
> **21. बनाने की शक्ति में वैधानिक उपकरणों को जोड़ने, संशोधित करने, बदलने या रद्द करने की शक्ति शामिल है।** - जहां किसी उत्तर प्रदेश अधिनियम द्वारा वैधानिक उपकरण जारी करने की शक्ति प्रदान की जाती है, तो उस शक्ति में ऐसी शक्ति शामिल है, जो समान तरीके से और समान मंजूरी और शर्तों (यदि कोई हो) के अधीन, इस प्रकार जारी किए गए किसी भी वैधानिक उपकरण को जोड़ने, संशोधित करने, बदलने या रद्द करने की शक्ति है।

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

75. अधिनियम, 1904 की धारा 14 और 21, एक साथ पढ़ने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि जहां किसी अधिकारी को किसी विशेष कार्य को करने के लिए शक्ति प्रदान की जाती है, ऐसी शक्ति का प्रयोग समय-समय पर अवसर आने पर किया जा सकता है और इसके साथ ही उक्त शक्ति के प्रयोग में पहले जारी की गई अधिसूचना को वापस लेने, संशोधित करने, संशोधित करने या रद्द करने की शक्ति भी होती है। इस संबंध में कानून को श्री सिद्धबली स्टील्स लिमिटेड और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य 21 के मामले में संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है, जिसमें इसे निम्नानुसार माना गया था:-

> "36. यह उल्लेख किया जा सकता है कि विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम, 1948 को संसद द्वारा विद्युत के उत्पादन और आपूर्ति को युक्तिसंगत बनाने और सामान्य रूप से विद्युत विकास के लिए अनुकूल उपाय करने के लिए अधिनियमित किया गया था। विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम, 1948 एक केंद्रीय अधिनियम होने के नाते, सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 14 और 21 के प्रावधान लागू होंगे। सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 14 इस प्रकार है:
>
> > "14. समय-समय पर प्रयोग करने योग्य शक्तियाँ। - (1) जहाँ, इस अधिनियम के प्रारंभ के बाद बनाए गए किसी केंद्रीय अधिनियम या विनियमन द्वारा कोई शक्ति प्रदान की जाती है, तब, जब तक कि कोई भिन्न इरादा प्रकट न हो, उस शक्ति का प्रयोग समय-समय पर आवश्यकतानुसार किया जा सकता है।
> >
> > (2) यह धारा चौदह जनवरी, 1887 को या उसके बाद बनाए गए सभी केंद्रीय अधिनियमों और विनियमों पर भी लागू होती है।"

जबकि सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 21 में निम्नलिखित लिखा है:

> "21. अधिसूचना, आदेश, नियम या उपनियमों को जोड़ने, संशोधित करने, बदलने या रद्द करने की शक्ति शामिल करने के लिए जारी करने की शक्ति। - जहां

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

Translated Version. Not for Legal Use.

किसी केंद्रीय अधिनियम या विनियमन द्वारा अधिसूचना, आदेश, नियम या उपनियम जारी करने की शक्ति प्रदान की जाती है, तो उस शक्ति में ऐसी शक्ति शामिल है, जो समान तरीके से प्रयोग की जा सकती है और समान मंजूरी और शर्तों (यदि कोई हो) के अधीन है, जो इस प्रकार जारी की गई किसी भी अधिसूचना, आदेश, नियम या उपनियमों को जोड़ने, संशोधित करने, बदलने या रद्द करने की शक्ति शामिल है।"

37. धारा 14 क्रमिक रूप से किसी शक्ति के प्रयोग से संबंधित है और इस प्रश्न से कोई संबंध नहीं रखती कि दावा की गई शक्ति प्रदान की जा सकती है या नहीं। सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 14 के अनुसार, किसी भी केंद्रीय अधिनियम द्वारा प्रदत्त किसी भी शक्ति का प्रयोग समय-समय पर अवसर आने पर किया जा सकता है, जब तक कि अधिनियम में कोई भिन्न आशय प्रकट न हो। विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम, 1948 में कोई भिन्न आशय नहीं है। इसलिए, 1948 के अधिनियम की धारा 49 के तहत अधिसूचना जारी करने की शक्ति का प्रयोग समय-समय पर परिस्थितियों की आवश्यकता होने पर किया जा सकता है।

38. धारा 21 इस सिद्धांत पर आधारित है कि सृजन करने की शक्ति में नष्ट करने की शक्ति और निर्मित वस्तु को बदलने की शक्ति भी शामिल है। धारा 21, अन्य बातों के अलावा, विशेष रूप से अधिसूचनाओं में कुछ जोड़ने, संशोधित करने, बदलने या रद्द करने की शक्ति से संबंधित है। अधिसूचना को रद्द करने की शक्ति अधिसूचना जारी करने की शक्ति में निहित है, बिना किसी सीमा या शर्त के। धारा 21 निर्माण के नियम को समाहित करती है। इसके आवेदन की प्रकृति और सीमा प्रासंगिक क़ानून द्वारा शासित होनी चाहिए जो अधिसूचना जारी करने की शक्ति प्रदान करती है, आदि। हालाँकि, इसमें कोई संदेह नहीं है कि अधीनस्थ कानून बनाने की शक्ति के प्रयोग में उसे रद्द करने की शक्ति भी शामिल है। यह धारा 21 द्वारा स्पष्ट किया गया है। उस सादृश्य पर एक प्रशासनिक निर्णय प्रतिसंहरणीय है जबकि एक न्यायिक निर्णय विशेष परिस्थितियों को छोड़कर प्रतिसंहरणीय नहीं है। अधीनस्थ विधान की शक्ति का प्रयोग भावी होगा और

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

पूर्वव्यापी नहीं हो सकता जब तक कि कानून स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ द्वारा ऐसे प्रयोग को अधिकृत न करे।

39. धारा 21 में निर्धारित सिद्धांत सामान्य अनुप्रयोग का है। धारा 21 में उल्लिखित रद्द करने की शक्ति बिना किसी सीमा या शर्त के है। यह इतनी सीमित शक्ति नहीं है कि इसका प्रयोग केवल एक बार किया जा सके। समय की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर इस शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है। जब किसी केंद्रीय अधिनियम द्वारा राज्य सरकार को अधिसूचना द्वारा नव-स्थापित औद्योगिक इकाइयों को रियायत और/या छूट के रूप में कुछ राहत देने की शक्ति दी जाती है, तो उसी प्रावधान के तहत एक और अधिसूचना जारी करके इसे कम किया जा सकता है और/या वापस लिया जा सकता है और इस तरह की शक्ति के प्रयोग को वचनबद्ध रोक के आधार पर गलत नहीं ठहराया जा सकता है।

40. यह याद रखना लाभदायक होगा कि सामान्य खंड अधिनियम का उद्देश्य शब्दों और कानूनी सिद्धांतों की व्याख्याओं के संबंध में एक ही क़ानून में विभिन्न प्रावधान रखना है, जिन्हें अन्यथा कई अलग-अलग अधिनियमों और विनियमों में अलग-अलग निर्दिष्ट करना होगा। सामान्य खंड अधिनियम जो कुछ भी कहता है, चाहे शब्दों के अर्थ के संबंध में या कानूनी सिद्धांतों के संबंध में, उसे हर उस क़ानून में पढ़ा जाना चाहिए जिस पर वह लागू होता है। इसके अलावा, छूट देने वाली विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम, 1948 की धारा 49 के तहत जारी अधिसूचना को कम करने और/या वापस लेने की शक्ति सामान्य खंड अधिनियम की धारा 21 की उचित व्याख्या पर धारा 49 के तहत ही निहित है। इसलिए, यह न्यायालय इस दृढ़ राय का है कि विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम, 1948 की धारा 49 के तहत जारी अधिसूचना को कम करने और/या वापस लेने की शक्ति, कुछ लाभ प्रदान करते हुए, प्रतिवादियों के पास उपलब्ध थी।

41. सामान्य खंड अधिनियम की धारा 14 और 21 के आधार पर, जब किसी प्राधिकरण को कोई विशेष कार्य करने के लिए शक्ति प्रदान की जाती है, तो ऐसी शक्ति का समय-

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

समय पर प्रयोग किया जा सकता है और इसके साथ पहले जारी की गई अधिसूचनाओं को वापस लेने, संशोधित करने, संशोधित करने या रद्द करने की शक्ति होती है, जिसका प्रयोग उसी तरह से और शक्ति के प्रयोग से जुड़ी समान शर्तों के अधीन किया जाना चाहिए। यह स्वीकार करना बहुत संकीर्ण दृष्टिकोण होगा कि एक बार तय की गई प्रभार्यता को बदला नहीं जा सकता। चूंकि विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम, 1948 में चार्ज करने का प्रावधान राज्य सरकार की छूट देने वाली अधिनियम की धारा 49 के तहत अधिसूचना जारी करने की शक्ति के अधीन है, इसलिए राज्य सरकार, सामान्य खंड अधिनियम की धारा 21 के मद्देनजर, छूट अधिसूचना को हमेशा वापस ले सकती है, रद्द कर सकती है, उसमें कुछ जोड़ सकती है या उसे संशोधित कर सकती है। कोई भी उद्योग यह दावा नहीं कर सकता कि सरकार धारा 49 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करे और छूट प्रदान करे और यह सरकार को तय करना है कि क्या शर्तें ऐसी हैं कि छूट दी जानी चाहिए या नहीं।

76. प्रशासनिक निर्णय द्वारा नीति निर्धारित करने की शक्ति में नीति को बदलने या वापस लेने की शक्ति भी शामिल है, जिसे **बजाज हिंदुस्तान लिमिटेड बनाम सर शादी लाल एंटरप्राइजेज लिमिटेड और अन्य** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा माना गया था।

"41. कार्यकारी निर्णयों या कानून द्वारा नीति निर्धारित करने की शक्ति में इसे वापस लेने की शक्ति भी शामिल है, जब तक कि यह शक्ति के दुर्भावनापूर्ण प्रयोग द्वारा न हो, या लिया गया निर्णय या कार्रवाई शक्ति के दुरुपयोग में न हो। जब उपयुक्त प्राधिकारी को कार्यकारी नीति या कानून के तहत निर्णय लेने का अधिकार दिया जाता है, तो वैध अपेक्षा का सिद्धांत कोई भूमिका नहीं निभाता है। न्यायालय प्राधिकारी को कार्यकारी या विधायी शक्ति के भीतर अपनी पसंद की पूरी श्रृंखला तय करने के लिए छोड़ देता है। आर्थिक नीति के मामलों में, यह स्थापित कानून है कि न्यायालय कार्यकारी और विधायिका को बड़ी छूट देता है। आयात या निर्यात के लिए लाइसेंस देना एक कार्यकारी या विधायी नीति है। सरकार देश की अर्थव्यवस्था के समग्र व्यापक हित में नीति तैयार करने के लिए विभिन्न कारकों को ध्यान में रखेगी। जब सरकार को यह

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

विश्वास हो जाए कि नीति में परिवर्तन जनहित में आवश्यक है तो वह नीति में संशोधन कर नई नीति बना सकती है।

77. इस प्रकार हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि अधिनियम, 1959 की धारा 3 के तहत "एक बड़े शहरी क्षेत्र" को "शहर" के रूप में निर्दिष्ट करने की शक्ति में पहले जारी अधिसूचना को संशोधित करने के लिए क्रमिक रूप से उक्त शक्ति का प्रयोग करने की शक्ति शामिल होगी, और धारा 3 के तहत नाम निर्दिष्ट करने की शक्ति में उक्त "बड़े शहरी क्षेत्र" का नाम बदलने की शक्ति भी शामिल होगी।

78. हालाँकि, हम यह नोट कर सकते हैं कि बड़े शहरी क्षेत्र के नामकरण/नाम बदलने के संबंध में प्रश्न के संबंध में हमारे सामने रखे गए अभिलेख केवल 18.08.2018 के एक प्रस्ताव का संदर्भ देते हैं, जिसे इलाहाबाद नगर निगम द्वारा पारित किया गया था, और इस प्रकार इस संबंध में मुद्दा समय से पहले है, और हमारे विचार में इस स्तर पर इस पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

79. वर्तमान मामले में संहिता, 2006 की धारा 6 की उपधारा (2) के परन्तुक की भाषा, नियम 3 और 4 के साथ पठित, नियम 2016 से यह स्पष्ट होता है कि किसी राजस्व क्षेत्र की सीमाओं में परिवर्तन करते समय राज्य सरकार द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्तियों और राजस्व क्षेत्र का नामकरण और नाम परिवर्तन करते समय प्रयोग की जाने वाली शक्तियों के बीच अंतर किया गया है। केवल किसी राजस्व क्षेत्र की सीमाओं में परिवर्तन करने के प्रस्ताव के मामले में ही धारा 6 की उपधारा (2) का परन्तुक लागू होता है। आपत्तियां आमंत्रित करने और ऐसे प्रस्तावों पर आपत्तियों पर विचार करने के लिए प्रस्ताव प्रकाशित करने की आवश्यकता केवल किसी राजस्व क्षेत्र की सीमाओं में परिवर्तन करने के प्रस्ताव पर विचार करने के मामले में आवश्यक है, न कि किसी राजस्व क्षेत्र का नामकरण या नाम परिवर्तन करने के संबंध में प्रस्ताव के मामले में। धारा 6 की उपधारा (2) के प्रावधान का कोई अन्य अर्थ लगाना क़ानून के इरादे के विपरीत होगा और वैधानिक प्रावधान के निर्माण के स्थापित सिद्धांतों के मद्देनजर ऐसा करने से बचना आवश्यक है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

80. धारा 6 की उपधारा (2) राज्य सरकार को उक्त प्रभाव की अधिसूचना जारी करके किसी राजस्व क्षेत्र का नाम रखने या नाम बदलने का अधिकार देती है।

81. ऐसे मामलों में न्यायिक समीक्षा के सीमित दायरे को सर्वोच्च न्यायालय ने उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम जौहरी माल23 में रेखांकित किया था और यह निम्नानुसार माना गया था:-

> "28. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 में निहित उच्च न्यायालय की न्यायिक समीक्षा की शक्ति का दायरा और सीमा प्रत्येक मामले में अलग-अलग होगी, आदेश की प्रकृति, प्रासंगिक क़ानून और साथ ही सार्वजनिक अधिकारियों द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्ति की प्रकृति सहित अन्य प्रासंगिक कारक, अर्थात्, क्या शक्ति वैधानिक, अर्ध-न्यायिक या प्रशासनिक है। न्यायिक समीक्षा की शक्ति का उद्देश्य पर्यवेक्षी भूमिका निभाना या सर्वव्यापी का चोला ओढ़ना नहीं है। शक्ति का उद्देश्य न तो कानून के शासन के तहत शासन की समीक्षा करना है और न ही न्यायालय राज्य के अन्य अंगों के लिए सर्वोच्चता द्वारा विशेष रूप से आरक्षित क्षेत्रों में कदम रखते हैं। निर्णय और कार्य जो न्यायिक स्वभाव नहीं रखते हैं, न्यायिक समीक्षा न्यायालय के समक्ष सख्ती से विचार के लिए नहीं आ सकते हैं। न्यायिक समीक्षा का सीमित दायरा, संक्षेप में, यह है:
>
> (i) न्यायालय, न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते समय, प्रशासनिक निकायों के निर्णयों पर अपील में नहीं बैठते हैं।
>
> (ii) न्यायिक समीक्षा के लिए याचिका केवल कुछ सुपरिभाषित आधारों पर ही दायर की जा सकती है।
>
> (iii) अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए किसी प्रशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश में न्यायिक समीक्षा में तब तक हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता जब तक यह न दर्शाया जाए कि विवेकाधिकार का प्रयोग स्वयं ही गलत या अवैध है।
>
> (iv) बिना किसी अतिरिक्त बात के केवल गलत निर्णय न्यायिक समीक्षा की शक्ति को आकर्षित करने के लिए पर्याप्त नहीं है; न्यायालय को प्रदान किया गया पर्यवेक्षी

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

अधिकार क्षेत्र यह देखने तक सीमित है कि न्यायाधिकरण अपने अधिकार की सीमाओं के भीतर कार्य करता है और उसके निर्णयों से न्याय में चूक नहीं होती है।

(v) न्यायालयों को सरकारी कर्तव्यों और कार्यों को करने के लिए नहीं बुलाया जा सकता। न्यायालय सामान्यतः राज्य के नीतिगत निर्णय में हस्तक्षेप नहीं करेगा। न्यायाधीश के सामाजिक और आर्थिक विश्वास को विधायी निकायों के निर्णय के विकल्प के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए। (इरा मुन्न बनाम इलिनोइस राज्य [94 यूएस 113: 24 एल एड 77 (1876) देखें]।"

82. वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 के तहत अधिसूचित अभयारण्य को स्थानांतरित करने के प्रस्ताव को चुनौती देने के संदर्भ में नीतिगत मामलों और प्रशासनिक निर्णयों में न्यायिक समीक्षा के दायरे पर कानून पर हाल ही में इस न्यायालय द्वारा भारत झुनझुनवाला बनाम भारत संघ और 4 अन्य 24 के मामले में विचार किया गया था जिसमें निम्नलिखित कहा गया था:-

"43. नीतिगत मामलों और प्रशासनिक निर्णयों में न्यायिक समीक्षा के दायरे पर सर्वोच्च न्यायालय ने कई मामलों में विचार किया है।

44. पर्यावरण प्रदूषण से जुड़ी एक सार्वजनिक परियोजना की स्थापना के खिलाफ एक जनहित याचिका में, थर्मल पावर प्लांट के निर्माण के प्रस्ताव को सरकार की मंजूरी को चुनौती दी गई थी, और मामले की गहराई से जांच करने और सरकार के फैसले में कुछ भी गलत नहीं पाए जाने के बाद उच्च न्यायालय ने रिट याचिका को खारिज कर दिया, जिसके बाद सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति याचिकाएं दायर की गईं और इस तरह के मुद्दे पर विचार करने में न्यायालय के स्व-लगाए गए प्रतिबंधों को दोहराते हुए, विशेष अनुमति याचिकाओं को सर्वोच्च न्यायालय ने दहानू तालुका पर्यावरण संरक्षण समूह और अन्य बनाम बॉम्बे उपनगरीय बिजली आपूर्ति कंपनी लिमिटेड और अन्य

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

(1991) 2 एससीसी 539 के मामले में निम्नलिखित टिप्पणियों के साथ खारिज कर दिया: -

"2. इस तरह के मुद्दे पर विचार करने में न्यायालय की सीमाएं, या अधिक उचित रूप से, स्व-लगाए गए प्रतिबंध, न्यायालय द्वारा ग्रामीण मुकदमेबाजी और हकदारी केंद्र बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य 1987 (1) एससीआर 637 और सचिदानंद पांडे बनाम पश्चिम बंगाल राज्य में निर्धारित किए गए हैं। उन निर्णयों में टिप्पणियों को यहां दोहराने की आवश्यकता नहीं है। यह देखना पर्याप्त है कि यह मुख्य रूप से संबंधित सरकारों के लिए है कि वे एक ओर लोगों के जीवन की स्थिति को बेहतर बनाने के लिए सार्वजनिक परियोजनाओं के महत्व पर विचार करें और दूसरी ओर सामाजिक और पारिस्थितिक संतुलन के संरक्षण, वनों की कटाई से बचने और प्रदूषण से मुक्त वातावरण और पानी की शुद्धता बनाए रखने की आवश्यकता पर विचार करें। विभिन्न तथ्यात्मक, तकनीकी और अन्य पहलुओं के प्रकाश में जो आम लोगों, विशेषज्ञों और सार्वजनिक कार्यकर्ताओं के विभिन्न निकायों द्वारा इसके ध्यान में लाए जा सकते हैं और इन दो परस्पर विरोधी उद्देश्यों के बीच एक उचित संतुलन बनाते हैं। न्यायालय की भूमिका यह जांचने तक सीमित है कि क्या सरकार ने सभी प्रासंगिक पहलुओं को ध्यान में रखा है और अपने अंतिम निर्णय पर पहुंचने में किसी भी भौतिक विचारों को न तो नजरअंदाज किया है और न ही बाहरी या महत्वहीन विचारों से प्रभावित हुई है।

45.सरकार द्वारा विकसित नीति की न्यायिक समीक्षा के दायरे पर फेडरेशन ऑफ रेलवे ऑफिसर्स एसोसिएशन एवं अन्य बनाम यूनियन ऑफ इंडिया (2003) 4 एससीसी 289 में सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विचार किया गया था, जिसमें रेलवे सुधार समिति और इस उद्देश्य के लिए गठित एक अध्ययन समूह द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर नए रेलवे जोन बनाने के सरकार के फैसले को चुनौती दी गई थी। उच्च न्यायालय के उस निर्णय को बरकरार रखते हुए जिसमें यह माना गया था कि सरकार के नीतिगत निर्णय

Translated Version: Not for Legal Use

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

की औचित्य या उपकार न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से बाहर है, विशेष अनुमति याचिकाओं को निम्नलिखित टिप्पणियों के साथ खारिज कर दिया गया:-

> "12. इस प्रकृति के प्रश्न की जांच करते समय जहां सरकार द्वारा नीति विकसित की जाती है, उसकी न्यायिक समीक्षा सीमित होती है। जब नीति जिसके अनुसार या जिस उद्देश्य के लिए विवेक का प्रयोग किया जाना है, वह स्पष्ट रूप से क़ानून में व्यक्त किया गया है, तो इसे अप्रतिबंधित विवेक नहीं कहा जा सकता है। नीति को प्रभावित करने वाले और तकनीकी विशेषज्ञता की आवश्यकता वाले मामलों में न्यायालय मामले को उन लोगों के निर्णय के लिए छोड़ देगा जो मुद्दों को संबोधित करने के लिए योग्य हैं। जब तक नीति या कार्रवाई संविधान और कानूनों के साथ असंगत या मनमानी या तर्कहीन या शक्ति का दुरुपयोग न हो, न्यायालय ऐसे मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा।"

46. एस्सार ऑयल लिमिटेड बनाम हलार उत्कर्ष समिति (2004) 2 एससीसी 392 में राज्य सरकार के निर्णय पर विचार करते हुए, जिसे चुनौती दी गई थी, अधिनियम, 1972 की धारा 29 के तहत अनुमति प्रदान करते हुए, इस विषय पर कानून निम्नलिखित शब्दों में निर्धारित किया गया था:-

> "37. एक बार जब राज्य सरकार ने यह सुनिश्चित करने के लिए सभी सावधानियां बरती हैं कि पर्यावरण पर प्रभाव क्षणिक और न्यूनतम है, तो कोई भी अदालत ऐसे व्यक्तियों की राय के स्थान पर अपना स्वयं का आकलन नहीं करेगी जो विशेषज्ञ हैं और जिन्होंने निष्पक्षता और क्षमता के साथ प्रश्न का निर्णय लिया हो। [देखें श्री सचिदानंद पांडे बनाम पश्चिम बंगाल राज्य] (1987) 2 एससीसी 295: एआईआर 1987 एससी 1109.] न्यायालयों से यह नहीं कहा जा सकता कि वे वन्यजीवों पर पाइपलाइनों के पर्यावरणीय प्रभाव का आकलन करें, लेकिन कम से कम वे यह देख सकते हैं कि स्थापित साख वाले और अपेक्षित विशेषज्ञता रखने वाले लोगों से

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

परामर्श किया गया है और राज्य सरकार द्वारा उनकी सिफारिशों का पालन किया गया है। यदि यह पाया जाता है कि सिफारिशों का पालन नहीं किया गया है, तो केवल इस तथ्य से कि इसमें बड़ी आर्थिक लागत शामिल है, न्यायालयों को विकास को रोकने और यदि आवश्यक हो, तो इसे रद्द करने से नहीं रोकना चाहिए।"

47. सरकार की निर्णय लेने की प्रक्रिया की न्यायिक समीक्षा का दायरा टिहरी बांध की सुरक्षा और पर्यावरणीय पहलुओं से संबंधित मामले में एन.डी. जयाल एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य में सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष फिर से आया। (2004) 9 एससीसी 362

जिसमें बांध के एक विशेष सुरक्षा पहलू पर सरकार के निर्णय, जो विशेषज्ञों के एक समूह द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर आधारित था, पर सवाल उठाया गया था, और सर्वोच्च न्यायालय ने अपने बहुमत के फैसले में कहा था कि न्यायालय वैज्ञानिक विश्लेषण के आधार पर निर्णय नहीं दे सकता है और जहां सरकार या संबंधित अधिकारियों ने सभी दृष्टिकोणों पर विचार करने और पूर्ण बुद्धिमता से निर्णय लेने के बाद निर्णय लिया है, वहां न्यायालय के लिए हस्तक्षेप करना उचित नहीं होगा और ऐसे मामलों को सरकार या कार्यान्वयन एजेंसी के विवेक पर छोड़ दिया जाना चाहिए, और केवल तभी, जब ऐसा निर्णय अप्रासंगिक विचार या सामग्री पर विचार न करने या पूरी तरह से मनमाना हो, तो न्यायालय हस्तक्षेप करेगा।

48. उपरोक्त निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई प्रासंगिक टिप्पणियां इस प्रकार हैं:-

"19. वर्तमान मामले में सरकार ने इस न्यायालय के निर्णय के बाद भी, जिसने टिहरी बांध विरोधी संघर्ष समिति के मामले (सुप्रा) में सुरक्षा पहलुओं पर सरकार के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया था, एहतियात के तौर पर सुरक्षा पहलुओं की फिर से गंभीरता से जांच की। हमारे समक्ष विद्युत मंत्रालय, भारत सरकार का दिनांक 1.2.1999 का कार्यालय ज्ञापन इस स्थिति की पुष्टि करता है। बांध की सुरक्षा से संतुष्ट होने के बाद सरकार ने आगे के कार्यों के लिए हरी झंडी दी थी। पिछले निर्णय पर पुनर्विचार

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

Translated Version: Not for Legal Use

मात्र से बांध की सुरक्षा के बारे में संदेह का संकेत नहीं माना जा सकता। सरकार चाहती तो परियोजना को छोड़ सकती थी। सरकार द्वारा 3डी नॉन-लीनियर टेस्ट या बांध ब्रेक विश्लेषण करने की आवश्यकता या प्रभावशीलता को ध्यान में रखा गया था और यदि सरकार ने संबंधित विशेषज्ञ निकायों की राय पर ऐसे परीक्षण नहीं करने का फैसला किया है, तो न्यायालय सरकार को ऐसे परीक्षण करने की सलाह नहीं दे सकता है, जब तक कि उस निर्णय के लिए दुर्भावना, मनमानी या तर्कहीनता को जिम्मेदार न ठहराया जाए। सरकार का निर्णय किसी भी वित्तीय बाधाओं या तकनीकी राय के रूप में अनिश्चितता पर आधारित नहीं है। यह स्पष्ट रूप से माना गया था कि पिछली समिति इस बात पर एकमत थी कि बनाया जाने वाला टिहरी बांध सुरक्षित है, लेकिन अत्यधिक सावधानी के आधार पर दी गई सलाह को स्वीकार नहीं किया गया। परिणामस्वरूप, हमें बांध के सुरक्षा पहलुओं की फिर से जांच करने की आवश्यकता नहीं है।

20. यह न्यायालय किसी भी परियोजना की सुरक्षा से संबंधित वैज्ञानिक विश्लेषण की अत्याधुनिकता पर निर्णय नहीं दे सकता। सुरक्षा और संबद्ध पहलुओं से संबंधित मामलों पर निर्णय लेते समय विज्ञान के विशेषज्ञ स्वयं अपनी राय में भिन्न हो सकते हैं। विशेषज्ञों के विरोधी दृष्टिकोणों पर भी पूर्ण विचार-विमर्श के बाद उचित विचार करना होगा। जब सरकार या संबंधित प्राधिकारियों ने सभी दृष्टिकोणों पर विचार-विमर्श करने और पूर्ण विचार-विमर्श के बाद कोई निर्णय लिया है, तो न्यायालय के लिए हस्तक्षेप करना उचित नहीं है। ऐसे मामलों को सरकार या कार्यान्वयन एजेंसी के परिपक्व विवेक पर छोड़ देना चाहिए। यह उनका विशेष अधिकार है। ऐसे मामलों में, यदि परिस्थिति की मांग हो, तो न्यायालयों को प्रशासनिक कानून के सुस्थापित सिद्धांतों के पैटर्न के आधार पर केवल एक पृथक निर्णय लेना चाहिए। यदि ऐसा कोई निर्णय अप्रासंगिक विचार या सामग्री पर विचार न करने या पूरी तरह से मनमाना है, तो न्यायालय बीच में आ जाएगा। यहां विचार करने का एकमात्र बिंदु यह है कि निर्णय लेने वाली एजेंसी ने सुविचारित निर्णय लिया है या नहीं। यदि उत्तर "हां" है, तो हस्तक्षेप करने की कोई

Translated Version: Not for Legal Use

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

आवश्यकता नहीं है। ऐसे मामलों में विचार निर्णय की प्रक्रिया में होता है न कि उसके गुण-दोष में।"

49. जनहित याचिका के दायरे और नीतिगत मामले में न्यायिक समीक्षा के प्रयोग पर सर्वोच्च न्यायालय ने रिवर्स नेटवर्किंग इन रे. (2012) 4 एससीसी 51 में विचार किया और इस संबंध में सिद्धांतों को निम्नलिखित शब्दों में पुनः प्रस्तुत किया गया:-

"74. उपर्युक्त सिद्धांत स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि एक ओर राज्यों और केंद्र के बीच और दूसरी ओर राज्यों के बीच आपसी सहयोग और आम सहमति का अधिक तत्व निर्मित किए जाने की आवश्यकता है। न्यायालयों के लिए न्यायिक समीक्षा की अपनी शक्ति के सीमित दायरे में और यहां तक कि जनहित याचिका के विस्तारित सिद्धांतों के आधार पर भी ऐसा प्रयोग करना बहुत कठिन होगा। इस न्यायालय के समक्ष जनहित याचिका को संवैधानिक कानून के दायरे में आना चाहिए, क्योंकि संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत इस न्यायालय के संवैधानिक क्षेत्राधिकार से व्यापक कोई क्षेत्राधिकार नहीं है। न्यायालय शायद ही देश के लिए नीतिगत निर्णय लेने या योजना बनाने या आर्थिक कारकों या अन्य महत्वपूर्ण पहलुओं जैसे कि नदी जोड़ो कार्यक्रम के तहत अधिग्रहण और निर्माण की आवश्यकता का निर्धारण करने का कार्य अपने ऊपर ले सकता है। न्यायालय ऐसे विशेषज्ञ निर्णय लेने के लिए सुसज्जित नहीं है और उन्हें अनिवार्य रूप से केंद्र सरकार और संबंधित राज्य के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए। न्यायालय द्वारा ऐसा प्रयास न्यायालय अपने पास उपलब्ध किसी भी उपकरण और विशेषज्ञता के बिना संबंधित क्षेत्रों के विशेषज्ञों की राय पर निर्णय देने के समान हो सकता है।

50. जल महल रिसॉर्ट्स (पी) लिमिटेड बनाम के.पी. शर्मा (2014) 8 एससीसी 804 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने झील और जल महल स्मारक को बहाल करने और सार्वजनिक-सार्वजनिक भागीदारी प्रारूप पर परिसर क्षेत्र घोषित करने के राजस्थान सरकार के फैसले की जांच करते हुए निम्नलिखित टिप्पणी की:-

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

"137 यद्यपि न्यायालयों से प्रायः मामले के तकनीकी और प्रशासनिक पहलुओं में प्रवेश करने की अपेक्षा की जाती है, लेकिन इसकी अपनी सीमाएँ हैं और शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत और सिद्धान्त के अनुरूप, राज्य प्राधिकरणों के निर्णयों पर कम से कम कुछ हद तक निर्भरता, विशेष रूप से यदि यह टेक्नोक्रेट द्वारा तैयार परियोजना रिपोर्ट से परिलक्षित विशेषज्ञों की राय पर आधारित है, जिसे राज्य प्रशासन के पूरे पदानुक्रम द्वारा स्वीकार किया गया है, जिसे एक के बाद एक सरकार द्वारा स्वीकार किया गया है, स्वीकृत किया गया है और अनुमोदित किया गया है, तो इसे उचित विश्वसनीयता और महत्व दिया जाना चाहिए। इसके बावजूद यदि न्यायालय किसी जनहित याचिका याचिकाकर्ता के कहने पर बिना किसी साक्ष्य के बाल-विभाजन वाली प्रस्तुतियों पर ध्यान देकर प्रशासनिक, तकनीकी और वित्तीय विशेषज्ञों सहित पूरे निकाय के दृष्टिकोण की योग्यता और ऐसे प्रशासनिक निर्णय की सत्यता को खारिज करना चाहता है, तो जनहित याचिका याचिकाकर्ताओं को कठोर सबूतों के साथ पेश किया जाएगा और उन्हें प्रशासकों, टेक्नोक्रेट और वित्तीय विशेषज्ञों सहित एक व्यापक निकाय द्वारा किए गए पूरे अभ्यास पर सवाल उठाने वाले असाधारण और अतिरिक्त न्यायिक लोकपाल के रूप में कार्य करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इससे राज्य के तीन अंगों के बीच टकराव नहीं तो घर्षण हो सकता है और शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत में निहित शासन के सिद्धांत को प्रभावित करेगा।

Translated Version: Not for Legal Use.

51. सेंटर फॉर ए पब्लिक इंटरेस्ट लिटिगेशन बनाम यूनियन ऑफ इंडिया एवं अन्य (2016) 6 एससीसी 408 के मामले में सरकार के नीतिगत निर्णय की न्यायिक समीक्षा के दायरे पर विचार करते समय, तकनीकी विशेषज्ञों के विचार-विमर्श के आधार पर सरकारी नीति की न्यायिक समीक्षा की शक्तियों के प्रयोग में न्यायालयों द्वारा न्यूनतम हस्तक्षेप की मांग करते हुए एक दृष्टिकोण अपनाया गया था। यह माना गया था कि सरकार के विवेक में हस्तक्षेप तभी उचित होगा जब वह मनमाना, दुर्भावनापूर्ण, बाहरी विचारों पर आधारित या वैधानिक प्रावधानों के

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

विरुद्ध पाया जाए। उक्त निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों को नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

"21. ऐसा नीतिगत निर्णय, जब मनमाना या अप्रासंगिक विचारों या दुर्भावनापूर्ण या किसी वैधानिक प्रावधानों के विरुद्ध नहीं पाया जाता है, तो न्यायिक समीक्षा की शक्ति के प्रयोग में न्यायालयों द्वारा किसी भी हस्तक्षेप की मांग नहीं करता है। कानून का यह सिद्धांत पत्थर की लकीर है जिसे इस न्यायालय द्वारा कई मौकों पर बार-बार कहा और दोहराया गया है। जल महल रिसॉर्ट्स (पी) लिमिटेड बनाम के.पी. शर्मा में न्यायालय ने इस सिद्धांत को इस प्रकार रेखांकित किया:

137.इससे यह स्पष्ट है कि यद्यपि न्यायालयों से प्रायः मामले के तकनीकी और प्रशासनिक पहलुओं में प्रवेश की अपेक्षा की जाती है, लेकिन इसकी अपनी सीमाएं हैं और शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत और सिद्धान्त के अनुरूप, राज्य प्राधिकारियों के निर्णयों पर कम से कम कुछ हद तक निर्भरता, विशेष रूप से यदि यह टेक्नोक्रेट द्वारा तैयार परियोजना रिपोर्ट से परिलक्षित विशेषज्ञों की राय पर आधारित है, जिसे राज्य प्रशासन के पूरे पदानुक्रम द्वारा स्वीकार किया गया है, जिसे एक के बाद एक सरकार द्वारा स्वीकार किया गया है, स्वीकार किया गया है और अनुमोदित किया गया है, को उचित विश्वसनीयता और महत्व दिया जाना चाहिए। इसके बावजूद यदि न्यायालय किसी जनहित याचिका याचिकाकर्ता के कहने पर बिना किसी साक्ष्य के बाल-विभाजनकारी प्रस्तुतियों पर ध्यान देकर प्रशासनिक, तकनीकी और वित्तीय विशेषज्ञों सहित संपूर्ण निकाय के दृष्टिकोण की योग्यता और ऐसे प्रशासनिक निर्णय की सत्यता को खारिज करना चाहता है, तो जनहित याचिका याचिकाकर्ताओं को कठोर प्रमाण प्रस्तुत करने होंगे और उन्हें प्रशासकों, टेक्नोक्रेट और वित्तीय विशेषज्ञों सहित व्यापक निकाय द्वारा किए गए संपूर्ण अभ्यास पर सवाल उठाने वाले असाधारण और न्यायेतर लोकपाल के रूप में कार्य करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। हमारे विचार से, इससे राज्य के तीन अंगों के बीच टकराव नहीं तो घर्षण हो सकता है और शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत में निहित शासन के सिद्धांत को प्रभावित करेगा। वास्तव में, इस न्यायालय ने एम.पी. ऑयल एक्सट्रैक्शन बनाम एम.पी. राज्य, (1997) 7 एससीसी 592 पृष्ठ 611 पर स्पष्ट रूप से टिप्पणी की है कि:

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

‘41. कार्यपालिका और विधायी कार्रवाई की न्यायिक समीक्षा की शक्ति को संवैधानिक योजना की सीमाओं के भीतर रखा जाना चाहिए ताकि न्यायपालिका की भूमिका के बारे में संदेह पैदा करने का कोई अवसर न हो, जो इन दिनों अक्सर चर्चा में रहने वाली अनुचित न्यायिक सक्रियता द्वारा अपनी सीमा का अतिक्रमण कर रही है। लोकतांत्रिक व्यवस्था, जिसके प्रति राजनीति इतनी गहराई से प्रतिबद्ध है, तब तक ठीक से काम नहीं कर सकती, जब तक कि तीनों अंग अपने-अपने क्षेत्रों में परस्पर सम्मान और सर्वोच्चता की आवश्यकता को न समझें।'

"... कुछ लोग अधिनियम की नीति को नासमझीपूर्ण और समुदाय के लिए खतरनाक भी मान सकते हैं। ... लेकिन न्यायिक न्यायाधिकरण का किसी भी अधिनियम की नीति से कोई लेना-देना नहीं है, जिसकी व्याख्या करने के लिए उसे बुलाया जा सकता है। यह निजी निर्णय का मामला हो सकता है। न्यायालय का कर्तव्य, और उसका एकमात्र कर्तव्य, अधिनियम की भाषा को निर्माण के स्थापित नियमों के अनुसार व्याख्या करना है।"

138. हालांकि, हम यह जोड़ना चाहते हैं और यह नहीं चाहते कि हमें गलत समझा जाए कि प्रशासनिक कार्रवाई या निर्णय कितना भी घोर या अपमानजनक क्यों न हो, जो राज्य या उससे जुड़े किसी अन्य प्राधिकरण के कहने पर किसी विशेष गतिविधि पर लिखा गया हो, न्यायालय को निष्क्रिय, निष्क्रिय और मूक दर्शक बने रहना चाहिए। जिस बात पर जोर दिया जा रहा है, वह यह है कि राज्य या केंद्रीय प्राधिकरण द्वारा उचित विचार-विमर्श और परिश्रम के बाद लिए गए प्रशासनिक निर्णय की सत्यता की जांच करते समय एक सीमा रेखा या कहावत "लक्ष्मण रेखा" होनी चाहिए जो उसके निर्णय और निष्पादन में मनमानी या अवैधता को प्रतिबिंबित न करे। यदि शासन के मामले में ऐसा संतुलन बिगड़ता है, तो विकास धीमा और बाधित होना तय है, खासकर आर्थिक उदारीकरण के युग में, जिसमें नीतिगत निर्णय के अनुसार वैश्विक खिलाड़ी भी शामिल हैं।

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

22. किसी सरकारी नीति की न्यायिक समीक्षा करते समय न्यायालयों द्वारा न्यूनतम हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है, जब उक्त नीति उस क्षेत्र के तकनीकी विशेषज्ञों के विचार-विमर्श का परिणाम हो, क्योंकि न्यायालय ऐसे क्षेत्र में जाने के लिए पर्याप्त रूप से सक्षम नहीं होते हैं, जिसे निष्पादन के विवेक पर छोड़ दिया जाता है। न्यायालय द्वारा नर्मदा बचाओ आंदोलन बनाम भारत संघ (2000) 10 एससीसी 664 में इसे बहुत ही खूबसूरती से समझाया गया था और फेडरेशन ऑफ रेलवे ऑफिसर्स एसोसिएशन बनाम भारत संघ (2003) 4 एससीसी 289 में निम्नलिखित शब्दों में दोहराया गया था:

> "12. इस प्रकार के किसी प्रश्न की जांच करते समय, जहां सरकार द्वारा नीति विकसित की जाती है, उसकी न्यायिक समीक्षा सीमित होती है। जब नीति जिसके अनुसार या जिस उद्देश्य के लिए विवेक का प्रयोग किया जाना है, वह स्पष्ट रूप से क़ानून में व्यक्त किया गया हो, तो इसे अप्रतिबंधित विवेक नहीं कहा जा सकता। नीति को प्रभावित करने वाले और तकनीकी विशेषज्ञता की आवश्यकता वाले मामलों में न्यायालय मामले को उन लोगों के निर्णय के लिए छोड़ देगा जो मुद्दों को संबोधित करने के लिए योग्य हैं। जब तक नीति या कार्रवाई संविधान और कानूनों के साथ असंगत या मनमानी या तर्कहीन या शक्ति का दुरुपयोग नहीं है, तब तक न्यायालय ऐसे मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा।"

23. न्यायिक समीक्षा की सीमाओं को फिर से दोहराया गया, इंग्लैंड में अदालतों द्वारा उसी स्थिति को इंगित करते हुए, जी. सुंदरराजन बनाम भारत संघ (2013) 6 एससीसी 620 में निम्नलिखित तरीके से:

> "15.1. लॉर्ड मैकनॉटन ने वाचर एंड संस लिमिटेड बनाम लंदन सोसाइटी ऑफ कंपोजिटर्स (1913 एसी 107: (1911-13) ऑल ईआर रेप 241 (एचएल) ने कहा है: कंपोजिटर्स (1913 एसी 107: (1911-13) ऑल ईआर रेप 241 (एचएल) ने कहा है:

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

"... कुछ लोग अधिनियम की नीति को नासमझीपूर्ण और समुदाय के लिए खतरनाक भी मान सकते हैं। ... लेकिन न्यायिक न्यायाधिकरण का किसी अधिनियम की नीति से कोई लेना-देना नहीं है, जिसकी व्याख्या करने के लिए उसे बुलाया जा सकता है। यह निजी निर्णय का मामला हो सकता है। न्यायालय का कर्तव्य, और उसका एकमात्र कर्तव्य, अधिनियम की भाषा को निर्माण के स्थापित नियमों के अनुसार व्याख्या करना है।"

15.2. काउंसिल ऑफ सिविल सर्विस यूनियन बनाम मिनिस्टर फॉर द सिविल सर्विस (1985 एसी 374: (1984) 3 डब्ल्यूएलआर 1174: (1984) 3 ऑल ईआर 935 (एचएल) में, यह माना गया कि यह निर्धारित करना न्यायालयों का काम नहीं है कि कोई विशेष नीति या उस नीति की पूर्ति में लिया गया कोई विशेष निर्णय उचित है या नहीं। वे केवल इस बात से चिंतित हैं कि वे निर्णय किस प्रकार लिए गए हैं, यदि वह तरीका अनुचित है, तो निर्णय लॉर्ड डिप्लॉक द्वारा "प्रक्रियात्मक अनुचितता" के रूप में लेबल किए गए अनुसार कलंकित होगा।

15.3. इस न्यायालय ने एम.पी. ऑयल एक्सट्रैक्शन बनाम एम.पी. राज्य (1997) 7 एससीसी 592 में माना कि जब तक बनाई गई नीति पूरी तरह से मनमानी, अनुचित और मनमाना न हो और केवल कार्यकारी प्राधिकारी के आदेश पर आधारित हो या संवैधानिक या वैधानिक आदेश में अमान्य हो, तब तक न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

15.4. इस न्यायालय के उग्र शुगर वर्क्स लिमिटेड बनाम दिल्ली प्रशासन (2001) 3 एससीसी 635, धामपुर शुगर (काशीपुर) लिमिटेड बनाम उत्तरांचल राज्य (2007) 8 एससीसी 418 और दिल्ली बार एसोसिएशन में दिए गए निर्णयों का संदर्भ भी दिया जा सकता है। बनाम भारत संघ (2008) 13 एससीसी 628।

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

15.5. इसलिए, हमारा दृढ़ मत है कि हम भारत-रूस समझौते के मद्देनजर कुडनकुलम में केकेएनपीपी की स्थापना के लिए भारत सरकार, एनपीसीआईएल आदि द्वारा लिए गए निर्णय पर निर्णय नहीं ले सकते।

24. जब आर्थिक नीति की न्यायिक समीक्षा की बात आती है, तो न्यायालय अधिक रूढ़िवादी होते हैं क्योंकि ऐसी आर्थिक नीतियाँ आम तौर पर विशेषज्ञों द्वारा बनाई जाती हैं। वर्ष 1978 में, प्राग आइस एंड ऑयल मिल्स बनाम भारत संघ (1978) 3 एससीसी 459: एआईआर 1978 एससी 1296: 1978 क्रि एलजे 1281 में इस न्यायालय के सात न्यायाधीशों की पीठ ने इस सिद्धांत को निम्नलिखित शब्दों में उकेरा:

"24. हमने लंबी दलीलें सुनी हैं, जो हमें यह दिखाने के लिए निर्देशित हैं कि देश के विभिन्न हिस्सों में तेल के उत्पादकों और विक्रेताओं को नुकसान होगा, जिससे वे सरसों के तेल का उत्पादन या व्यापार करना छोड़ देंगे। यह तर्क दिया गया कि इसका स्वाभाविक रूप से उपभोक्ताओं पर असर पड़ेगा, जिनके लिए सरसों का तेल अंततः पहले से कहीं अधिक दुर्लभ हो जाएगा। हमें नहीं लगता कि यह इस न्यायालय या किसी भी न्यायालय का काम है कि वह आर्थिक नीति के ऐसे मामलों पर निर्णय दे, जिन्हें तय करने के लिए सरकार को छोड़ना पड़ता है। उनमें से कई, मूल्य निर्धारण के उपाय के रूप में, अंतिम परिणामों की भविष्यवाणी के मामले हैं, जिन पर विशेषज्ञ भी गंभीर रूप से गलत हो सकते हैं और निस्संदेह मतभेद हो सकते हैं। न्यायालयों से निश्चित रूप से विशेषज्ञों की सहायता के बिना उन्हें तय करने की उम्मीद नहीं की जा सकती है।"

25. संविधान पीठ की उपरोक्त टिप्पणियों से सहायता लेते हुए, न्यायालय ने पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड बनाम आरबीआई (1992) 2एससीसी 343 में निम्नलिखित कथन के साथ सावधानी के शब्दों को दोहराया:

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

"31. न्यायालय का कार्य यह देखना है कि वैधानिक प्राधिकार का दुरुपयोग न हो, लेकिन उस प्राधिकार को सौंपे गए कार्य को अपने लिए उचित न ठहराना। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि वैधानिक शक्तियों से संपन्न एक सार्वजनिक निकाय को अपनी शक्ति का अतिक्रमण या दुरुपयोग न करने का ध्यान रखना चाहिए। उसे सौंपे गए अधिकार की सीमाओं के भीतर रहना चाहिए। उसे सद्भावनापूर्वक कार्य करना चाहिए और उसे उचित तरीके से कार्य करना चाहिए। न्यायालयों को आर्थिक नीति में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, जो विशेषज्ञों का कार्य है। आर्थिक नीति के मामलों पर निर्णय देना न्यायालयों का कार्य नहीं है और इसे अनिवार्य रूप से विशेषज्ञ निकायों पर छोड़ दिया जाना चाहिए। ऐसे मामलों में विशेषज्ञ भी गंभीरता से और निस्संदेह मतभेद कर सकते हैं। न्यायालयों से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वे विशेषज्ञों की सहायता के बिना भी उनका निर्णय लें।"

26. इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रशासनिक कार्रवाई की न्यायिक समीक्षा का प्राथमिक और केंद्रीय उद्देश्य अच्छे प्रशासन को बढ़ावा देना है। यह सुनिश्चित करना है कि प्रशासनिक निकाय सार्वजनिक हित को बढ़ावा देने के लिए कुशलतापूर्वक और ईमानदारी से कार्य करें। उन्हें सार्वजनिक हित को ध्यान में रखते हुए निष्पक्ष, पारदर्शी और निष्पक्ष तरीके से काम करना चाहिए। यह सुनिश्चित करने के लिए कि उपर्युक्त प्रमुख उद्देश्य प्राप्त हों, इस न्यायालय ने न्यायिक समीक्षा की रूपरेखा में नए आयाम जोड़े हैं और हाल के वर्षों में इसमें जबरदस्त बदलाव आया है। न्यायिक समीक्षा का दायरा बहुत बढ़ गया है और अब यह सरकार की बदलती संरचना के जवाब में वैधानिक शक्तियों के दायरे से परे "सार्वजनिक" शक्ति के विविध रूपों को शामिल करने के लिए आगे बढ़ गया है। इस प्रकार, न केवल न्यायिक समीक्षा का दायरा व्यापक हो गया है; बल्कि इसकी तीव्रता भी बढ़ गई है। इसके बावजूद,

"हालाँकि, न्यायिक समीक्षा की धारणाओं में यह बात मुख्य है कि न्यायालय विवेकाधिकार के प्रयोग में केवल इसलिए हस्तक्षेप नहीं कर सकते क्योंकि वे विचाराधीन निर्णय या कार्रवाई से असहमत हैं; इसके बजाय, न्यायालय केवल तभी हस्तक्षेप करते

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

हैं जब कोई विशिष्ट दोष स्थापित किया जा सकता है - उदाहरण के लिए, यदि निर्णय प्रक्रियात्मक रूप से अनुचित था।"

27. विवेकाधिकार शक्ति का अस्तित्व इसलिए है क्योंकि यह निर्णयकर्ता को विशेष स्थिति की माँगों के अनुसार उचित तरीके से प्रतिक्रिया करने के लिए प्रोत्साहित करता है। जब निर्णय लेना नीति-आधारित होता है, तो ऐसे निर्णय लेने में हस्तक्षेप करने का न्यायिक दृष्टिकोण संकीर्ण हो जाता है। ऐसे मामलों में, सबसे पहले, यह जाँच की जानी चाहिए कि क्या विचाराधीन नीति किसी वैधानिक प्रावधान के विपरीत है या भेदभावपूर्ण/मनमाना है या अप्रासंगिक विचारों पर आधारित है। यदि विशेष नीति इन मापदंडों को पूरा करती है और वैध मानी जाती है, तो जाँच की जाने वाली एकमात्र समस्या यह है कि क्या विचाराधीन निर्णय उक्त नीति के अनुरूप है।"

52. जी. सुंदरराजन बनाम भारत संघ (2013) 6 एससीसी 620 में सुरक्षा और पर्यावरण संरक्षण के आधार पर परमाणु ऊर्जा संयंत्र की स्थापना के संबंध में उठाई गई चुनौती को सर्वोच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया था और यह माना था कि नीति की निष्पक्षता और तर्कसंगतता और विशेषज्ञों द्वारा दिए गए निष्कर्ष न्यायिक समीक्षा के योग्य नहीं थे और न्यायालय केवल इस बात से चिंतित थे कि नीतिगत निर्णय किस तरह लिए गए थे और जब तक कि बनाई गई नीति पूरी तरह से मनमानी, अनुचित और मनमानी न हो और केवल प्राधिकरण के आदेश पर आधारित न हो या संवैधानिक या वैधानिक आदेश में अमान्य न हो, तब तक न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं थी।

83. न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते समय लागू किए जा सकने वाले "तर्कसंगतता के मानक" के संबंध में, हम विलियम वेड और क्रिस्टोफर फोर्सिथ द्वारा **प्रशासनिक कानून पर प्रसिद्ध ग्रंथ 25 से निम्नलिखित उद्धरण** का लाभप्रद रूप से उल्लेख कर सकते हैं:-

"सिद्धांत कि शक्तियों का प्रयोग उचित रूप से किया जाना चाहिए, को इस कम महत्वपूर्ण सिद्धांत के साथ सामंजस्य स्थापित करना होगा कि न्यायालय को उस

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

सार्वजनिक प्राधिकरण के विवेक का अतिक्रमण नहीं करना चाहिए जिसे संसद ने निर्णय लेने के लिए नियुक्त किया है। कानूनी तर्कसंगतता की सीमाओं के भीतर वह क्षेत्र है जिसमें निर्णय लेने वाले प्राधिकारी के पास वास्तव में स्वतंत्र विवेक होता है। यदि वह उन सीमाओं को पार करता है, तो वह अधिकार क्षेत्र से बाहर कार्य करता है। इसलिए न्यायालय को सीमाओं को बहुत अधिक कसने के प्रलोभन का विरोध करना चाहिए, केवल अपनी राय के अनुसार..... न्यायालय को एक वस्तुनिष्ठ मानक लागू करने का प्रयास करना चाहिए जो निर्णय लेने वाले प्राधिकारी को उन सभी विकल्पों की पूरी श्रृंखला प्रदान करता है जिन्हें विधायिका ने इरादा किया है। जो निर्णय असाधारण या मनमाने हैं, वे वैध नहीं हो सकते। लेकिन यदि निर्णय तर्कसंगतता की सीमाओं के भीतर है, तो न्यायालय के कार्य का यह हिस्सा नहीं है कि वह इसके गुणों पर आगे विचार करे। 'इस सवाल से कि कोई विशेष नीति बुद्धिमानीपूर्ण है या मूर्खतापूर्ण, न्यायालय चिंतित नहीं है; वह केवल तभी हस्तक्षेप कर सकता है जब उसे आगे बढ़ाना प्राधिकरण की शक्तियों से परे हो।"

84. **स्टर्लिंग कंप्यूटर्स लिमिटेड बनाम मेसर्स एम एंड एन पब्लिकेशन्स लिमिटेड एवं अन्य** में अनुबंध प्रदान करने के संदर्भ में न्यायिक समीक्षा के दायरे पर विचार करते समय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी उपर्युक्त अनुच्छेद पर ध्यान दिया गया था।

85. न्यायिक समीक्षा की शक्तियों का प्रयोग करते समय न्यायालयों की संवैधानिक भूमिका में निहित सीमाओं पर **डी स्मिथ की न्यायिक समीक्षा** में चर्चा की गई है, तथा पैरा 1-033 में इसे इस प्रकार कहा गया है:-

"शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत सामाजिक एवं आर्थिक नीति के मामलों को न्यायपालिका के बजाय विधायिका एवं कार्यपालिका को सौंपता है। इसलिए न्यायालयों को विधायिका या कार्यपालिका द्वारा विवेकाधिकार के प्रयोग में हस्तक्षेप करने से बचना चाहिए, जब इसका उद्देश्य नीति का अनुसरण करना हो। सामाजिक, आर्थिक या राजनीतिक वरीयता के उपयोगितावादी गणनाओं को तौलना न्यायाधीशों का काम नहीं है।"

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

86. इस प्रकार हमारा यह मत है कि किसी राजस्व क्षेत्र का नामकरण या नाम परिवर्तन करते समय राज्य सरकार द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्तियाँ विशुद्ध रूप से एक प्रशासनिक शक्ति है जो नीतिगत निर्णय के दायरे में आती है, और ऐसे प्रशासनिक और नीतिगत निर्णयों की न्यायिक समीक्षा की स्पष्ट रूप से सीमाएँ निर्धारित हैं।

87. वर्तमान मामले जैसा ही एक मुद्दा **मोहम्मद मुस्ताक अहमद बनाम महाराष्ट्र राज्य** के मामले में उठा, जिसके तहत महाराष्ट्र राज्य द्वारा जारी एक अधिसूचना जिसमें औरंगाबाद राजस्व प्रभाग का नाम बदलकर मराठवाड़ा प्रभाग, औरंगाबाद जिले का नाम संभाजीनगर जिला और औरंगाबाद उप-विभाग का नाम बदलकर संभाजीनगर उप-विभाग, औरंगाबाद तालुका का नाम संभाजीनगर तालुका और औरंगाबाद शहर का नाम संभाजीनगर शहर करने के राज्य सरकार के इरादे को सूचित करते हुए एक मसौदा अधिसूचना प्रकाशित की गई थी, को चुनौती दी गई थी। राजस्व क्षेत्र की सीमाओं को बदलने और राजस्व क्षेत्र का नाम बदलने के लिए राज्य सरकार की शक्तियों के संबंध में महाराष्ट्र भूमि राजस्व संहिता, 196629 के प्रासंगिक राज्य अधिनियम के तहत निहित प्रावधानों को नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

> "6. महाराष्ट्र भूमि राजस्व संहिता, 1966 की धारा 4, जहाँ तक इस याचिका के प्रयोजनों के लिए प्रासंगिक है, नीचे उद्धृत की गई है: -
>
> 4. (1) राज्य सरकार आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा निर्दिष्ट कर सकती है -
>
> (i) जिले (बॉम्बे शहर सहित) जो एक प्रभाग का गठन करते हैं;
>
> (ii) उप-विभाग जो एक जिला बनाते हैं;
>
> (iii) तालुका जो एक उप-विभाग बनाते हैं;
>
> (iv) गाँव जो एक तालुका बनाते हैं;
>
> (v) स्थानीय क्षेत्र जो एक गाँव बनाते हैं; और
>
> (vi) समामेलन, विभाजन या किसी भी तरह से गठित किसी भी ऐसे राजस्व क्षेत्र की सीमाओं को बदल सकते हैं, या किसी भी ऐसे राजस्व क्षेत्र को समाप्त कर सकते हैं और किसी भी ऐसे राजस्व क्षेत्र का नाम बदल सकते हैं और किसी भी ऐसे राजस्व

Translated Version Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

क्षेत्र का नाम बदल सकते हैं; और किसी भी मामले में जहाँ किसी क्षेत्र का नाम बदला जाता है, तो किसी भी कानून या उपकरण या अन्य दस्तावेज़ में नामांकित क्षेत्र के सभी संदर्भ, जब तक कि स्पष्ट रूप से अन्यथा प्रदान नहीं किया जाता है:

.....

(2) .....

3. इस संहिता के प्रारंभ में विद्यमान संभाग, जिले, उप-संभाग, तालुका, सर्किल, सभा और गांव, क्रमशः संभाग, जिले, उप-संभाग, तालुका, सर्किल, सभा और गांव के नाम से बने रहेंगे, जब तक कि इस धारा के अंतर्गत अन्यथा परिवर्तन न किया जाए।

88. संहिता, 1966 की धारा 4 की उपधारा (1) का खंड (vi), जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है, राजस्व क्षेत्र की सीमाओं के परिवर्तन के विषय पर है, जो समामेलन, विभाजन या किसी भी तरीके से गठित किया गया है और क्षेत्रों को नाम देने या पुनःनाम देने की शक्ति देता है, और उच्च न्यायालय द्वारा यह माना गया कि संहिता, 1966 की धारा 4 राज्य सरकार की कार्यकारी शक्ति की घोषणा है, जो किसी भी राजस्व क्षेत्र को नाम देने या पुनःनाम देने की शक्ति देती है, चाहे वह एक प्रभाग, एक जिला, एक उप-विभाग, एक तालुका या एक गांव हो जिसमें निम्नलिखित शब्दों में शहर या नगर शामिल हैं:-

“धारा 4 की उपधारा (1) का खंड (vi) राजस्व क्षेत्र की सीमाओं में विलय, विभाजन या किसी भी तरीके से परिवर्तन के बारे में बात करता है और क्षेत्रों को नाम देने या पुनःनाम देने की शक्ति देता है और यह प्रावधान करता है कि क्षेत्रों का नाम देने और/या पुनःनाम देने के बाद, मूल नाम के तहत क्षेत्र के लिए किसी स्थानीय कानून, साधन या अन्य दस्तावेज का संदर्भ उस क्षेत्र के संदर्भ के रूप में माना जाएगा जिसका नाम बदला गया है, जब तक कि अन्यथा स्पष्ट रूप से प्रावधान न किया गया हो। इसलिए, धारा 4 किसी भी राजस्व क्षेत्र का नाम देने या पुनःनाम देने की राज्य की

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

कार्यकारी शक्ति की घोषणा है, चाहे वह कोई डिवीजन, जिला, उप-डिवीजन, तालुका या गांव हो जिसमें कस्बा या शहर शामिल है। इस उप-धारा में ऐसा कुछ भी नहीं है जो श्री लतीफ के इस तर्क का समर्थन करता हो कि शक्ति का प्रयोग केवल राजस्व क्षेत्र की सीमाओं में परिवर्तन होने की स्थिति में ही किया जा सकता है। उक्त धारा 4 की उप-धारा (3) स्थिति को स्पष्ट करती है। इसमें कहा गया है कि संभाग, जिले, उप-संभाग, तालुका, मंडल, सभा और गांव अपने-अपने नामों के अंतर्गत बने रहेंगे, जब तक कि महाराष्ट्र भूमि राजस्व संहिता, 1966 की धारा 4 के अंतर्गत अन्यथा परिवर्तन न किया जाए, जो किसी भी राजस्व क्षेत्र का नाम बदलने तक विस्तारित होगा और यह केवल सीमाओं के परिवर्तन के समय शक्ति को सीमित करने वाले किसी भी खंड द्वारा योग्य नहीं है। शहरी विकास विभाग द्वारा जारी अधिसूचना, जो रिट याचिका संख्या 5565/1995 में चुनौती का विषय है, केवल परिणामी प्रकृति की है कि यदि राज्य सरकार नाम बदलती है तो औरंगाबाद शहर के लिए नगर निगम का गठन करने वाली 3.12.1982 की अधिसूचना को महाराष्ट्र भूमि राजस्व संहिता, 1966 की धारा 4 की उपधारा (3) के तहत प्रभावी रूप से संशोधित करना होगा। इसलिए, श्री लतीफ का यह तर्क कि दोनों अधिसूचनाएँ पूरी तरह से अधिकार क्षेत्र से बाहर हैं, को खारिज करना होगा।"

89. इसके अलावा, उच्च न्यायालय ने याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए इस तर्क को खारिज कर दिया कि नाम बदलने से संस्कृति और विरासत के संबंध में नागरिकों के जीवन पर असर पड़ेगा और यह माना गया कि प्रभाग, जिला, तालुका, शहर या गांव का नामकरण या पुनः नामकरण किसी भी तरह से लोगों के कल्याण के लिए नहीं कहा जा सकता है और उक्त निर्णय नीतिगत निर्णय होने के कारण ऐसे निर्णयों की न्यायिक समीक्षा की एक सीमा है। उच्च न्यायालय ने इस प्रकार माना:-

"8. हालांकि याचिकाकर्ता के वकील ने हमारे सामने बहुत जोरदार तरीके से प्रस्तुत किया कि औरंगाबाद शहर का नाम शहर के नागरिकों द्वारा प्राप्त विरासत का अभिन्न अंग है, लेकिन इस बारे में कुछ भी रिकॉर्ड में नहीं रखा गया है कि संस्कृति

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

और विरासत के संबंध में नागरिकों का जीवन केवल नाम बदलने से कैसे प्रभावित होगा। ....."

90. मंडल के मुख्यालय के स्थान को बदलने के संबंध में एक समान विवाद **बी.एन. शंकरप्पा बनाम उथानूर श्रीनिवास एवं अन्य** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विचारार्थ आया था, जिसमें कर्नाटक जिला परिषद, तालुक पंचायत समितियां, मंडल पंचायतें और न्याय पंचायत अधिनियम, 1983 की धारा 4 के अंतर्गत निहित प्रावधानों पर विचार किया गया था, और यह माना गया था कि मंडल के मुख्यालय को निर्दिष्ट करने की शक्ति का प्रयोग समय-समय पर आवश्यकतानुसार किया जा सकता है और इस संबंध में अंतिम निर्णय सरकार पर छोड़ दिया गया था और संबंधित प्राधिकारी को विवेकाधिकार प्रदान करने का विकल्प अनिवार्य रूप से उक्त प्राधिकारी के विवेक पर छोड़ दिया जाना चाहिए और न्यायालयों के लिए इस प्रकार प्रयोग किए गए विवेकाधिकार में हस्तक्षेप करना उचित नहीं होगा, जब तक कि इसका प्रयोग मनमाने ढंग से या मनमाने ढंग से, बिना उचित विचार के या गुप्त या दुर्भावनापूर्ण उद्देश्य से न किया जाए। इस संबंध में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियां नीचे दी जा रही हैं:-

"7. जैसा कि पहले बताया गया है, धारा 4(1) उप आयुक्त को दो काम करने का अधिकार देती है, अर्थात्, (i) किसी क्षेत्र को मंडल घोषित करना, और (ii) उसका मुख्यालय निर्दिष्ट करना। 'मुख्यालय निर्दिष्ट करें' शब्दों से पहले 'भी' शब्द का अर्थ यह नहीं लगाया जा सकता कि एक बार प्रयोग की गई शक्ति समाप्त हो जाएगी। प्रतिवादी के वकील द्वारा प्रस्तुत किया गया ऐसा निर्माण प्रावधान की भाषा के अनुरूप नहीं है। यह केवल यह बताता है कि जब उप आयुक्त पहली बार मंडल का गठन करता है तो उसके लिए उसका मुख्यालय भी निर्दिष्ट करना आवश्यक होगा। उप आयुक्त को प्रदत्त मुख्यालय निर्दिष्ट करने की यह शक्ति कर्नाटक सामान्य खंड अधिनियम की धारा 14 के आधार पर समय-समय पर आवश्यकतानुसार प्रयोग की जा सकती है। उच्च न्यायालय का ध्यान धारा 14 के प्रावधान की ओर नहीं गया जब उसने रिट अपील संख्या 2564/1987 और रिट याचिका संख्या 375/1989 का 28 मई, 1991 को निपटारा किया। यह सही है कि धारा 4 की उपधारा (2) द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग तब किया जा सकता है जब मंडल के क्षेत्र में या तो वृद्धि या कमी

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

करके परिवर्तन किया जाता है। धारा 4 की उपधारा (2) के खंड (सी) के तहत उपायुक्त को किसी भी मंडल का नाम बदलने की शक्ति भी दी गई है। इसलिए उपधारा (2) की योजना यह दर्शाती है कि जब किसी मंडल के क्षेत्र में कोई वृद्धि या कमी होती है, तो उपायुक्त अधिसूचना द्वारा प्रस्ताव के पूर्व प्रकाशन के बाद उस शक्ति का प्रयोग कर सकता है और यदि आवश्यक हो तो मंडल का नाम बदल सकता है। धारा 4 की उपधारा (2) में मुख्यालय को नए सिरे से निर्दिष्ट करने की शक्ति का अभाव जरूरी नहीं है कि एक बार मंडल का प्रारंभिक गठन हो जाने और मुख्यालय निर्दिष्ट हो जाने के बाद शक्ति समाप्त हो जाती है, कर्नाटक सामान्य खंड अधिनियम की धारा 14 के बावजूद। यदि अधिनियम की धारा 4 की योजना पर ऐसी व्याख्या रखी जाती है तो न तो उपायुक्त और न ही कोई अन्य प्राधिकारी मंडल के मुख्यालय के रूप में किसी अन्य स्थान को बदलने और निर्दिष्ट करने में सक्षम होंगे। ऐसा दृष्टिकोण एक शून्य पैदा करेगा और यहां तक कि जब किसी अन्य मुख्यालय को निर्दिष्ट करने की वास्तविक आवश्यकता उत्पन्न होती है, तो अधिकारी अधिनियम में एक विशिष्ट प्रावधान की कमी के कारण शक्ति का प्रयोग करने में सक्षम नहीं होंगे और इससे परिहार्य कठिनाई और जटिलताएं हो सकती हैं। इसलिए, यह आवश्यक है कि हम अधिनियम के प्रावधान को इस तरह से पढ़ें ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि ऐसा शून्य उत्पन्न न हो और संबंधित प्राधिकरण में शक्ति बनी रहे जिसका वास्तविक आवश्यकता उत्पन्न होने पर प्रयोग किया जा सके। जे.आर. रघुपति बनाम ए.पी. राज्य (1988) 4 एससीसी 364 में इस न्यायालय ने टिप्पणी की कि मंडल मुख्यालय के स्थान या स्थान के बारे में अंतिम निर्णय सरकार को लेना है और इस संबंध में संबंधित प्राधिकारी को विवेकाधिकार प्रदान करने का विकल्प अनिवार्य रूप से उक्त प्राधिकारी के विवेकाधिकार पर छोड़ देना चाहिए और न्यायालयों के लिए इस प्रकार प्रयोग किए गए विवेकाधिकार में हस्तक्षेप करना उचित नहीं होगा। इसका यह अर्थ नहीं है कि विवेकाधिकार का प्रयोग मनमाने या मनमाने तरीके से बिना सोचे-समझे या गुप्त या दुर्भावनापूर्ण उद्देश्य से किया जा सकता है। यदि यह दर्शाया जाता है कि विवेकाधिकार का प्रयोग इस प्रकार किया गया था तो न्यायालयों के लिए निश्चित रूप से विवेकाधिकार में हस्तक्षेप करना खुला होगा, लेकिन अन्यथा नहीं।"

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

91. **जे.आर. रघुपति एवं अन्य बनाम आंध्र प्रदेश राज्य एवं अन्य** के मामले में, जिसका उल्लेख बी.एन. शंकरप्पा (सुप्रा) में भी किया गया है, कुछ राजस्व मंडलों के गठन की वैधता और औचित्य, विशेष रूप से मंडल मुख्यालयों का स्थान, कुछ मंडलों को समाप्त करना या मंडल मुख्यालयों को स्थानांतरित करना, कुछ मंडलों में गांवों को हटाना और जोड़ना, कई याचिकाओं में सवाल उठाए गए थे और कुछ मामलों में उच्च न्यायालय ने किसी विशेष स्थान पर मंडल मुख्यालयों के स्थान निर्धारण की अधिसूचना को यह कहते हुए रद्द कर दिया था कि इसमें दिशा-निर्देशों का उल्लंघन हुआ है और सरकार को मंडल मुख्यालयों के स्थान निर्धारण के लिए नई अधिसूचना जारी करने के निर्देश दिए गए थे। विशेष अनुमति द्वारा अपीलों पर सुनवाई की गई और सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि मंडल मुख्यालय के स्थान में हस्तक्षेप करना और अधिसूचनाओं को इस आधार पर रद्द करना उच्च न्यायालय के लिए उचित नहीं था कि सरकार ने दिशा-निर्देशों का उल्लंघन किया है या एक स्थान अधिक केंद्रीय रूप से स्थित है या दूसरे स्थान पर स्थान सामान्य सार्वजनिक सुविधा को बढ़ावा देगा या मुख्यालय को उस विशेष स्थान पर स्थापित किया जाना चाहिए ताकि उसके आसपास के क्षेत्र का विकास हो सके। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों को नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

> "9. ..... हमारा मत है कि उच्च न्यायालय को राज्य सरकार द्वारा मंडल मुख्यालय को किसी विशेष स्थान पर स्थापित करने के निर्णय पर अपील करने का कोई अधिकार नहीं है। किसी विशेष गांव में ऐसे मुख्यालय को स्थापित करने का निर्णय विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है। उच्च न्यायालय स्पष्ट रूप से मंडल मुख्यालय के स्थान के लिए किसी विशेष स्थान की तुलना में अन्य स्थान की तुलनात्मक योग्यता का स्वयं मूल्यांकन नहीं कर सकता है। .....
>
> x x x x x
>
> 31. हमें कुछ मामलों में उच्च न्यायालय के निर्णय को बनाए रखना कठिन लगता है, जहां उसने मंडल मुख्यालय के स्थान के साथ हस्तक्षेप किया है और इस आधार पर विवादित अधिसूचनाओं को रद्द कर दिया है कि सरकार ने दिशानिर्देशों का उल्लंघन करते हुए काम किया है कि एक स्थान या दूसरा अधिक केंद्रीय रूप से स्थित था या

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

दूसरे स्थान पर स्थान सामान्य सार्वजनिक सुविधा को बढ़ावा देगा, या यह कि मुख्यालय को उसके आसपास के क्षेत्र को विकसित करने की दृष्टि से किसी विशेष स्थान पर तय किया जाना चाहिए। ....."

92. नए जिले के निर्माण के संबंध में राज्य सरकार की शक्ति पर मधुसूदन नायर बनाम केरल के राज्यपाल33 मामले में केरल उच्च न्यायालय के समक्ष विचार किया गया, जिसमें आर. सुल्तान बनाम आंध्र प्रदेश राज्य34 मामले में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के खंडपीठ के फैसले का हवाला देते हुए, यह निम्नानुसार माना गया:-

"15. न्यायमूर्ति एकबोटे के माध्यम से आंध्र उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने, जैसा कि उन्होंने आर. सुल्तान बनाम राज्य आईएलआर (1970) एपी 1075 मामले में माना था:

"निःसंदेह संविधान में भारत के संविधान के अनुच्छेद 3 के अनुसार कोई प्रावधान नहीं है, जो राज्य सरकार को राज्यों की भौगोलिक सीमाओं के भीतर स्थित जिलों, तालुकों या गांवों को संगठित या पुनर्गठित करने का अधिकार देता हो। हालांकि संविधान में किसी विशिष्ट प्रावधान के अभाव से यह अनुमान लगाना गलत होगा कि राज्य कार्यपालिका या विधानमंडल राज्य के क्षेत्र को कई जिलों, डिवीजनों, तालुकों, फिरखासों या गांवों में विभाजित करने के लिए सक्षम नहीं है।

अनुच्छेद 154 राज्य की कार्यकारी शक्ति राज्यपाल में निहित करता है। कानून को प्रभावी ढंग से क्रियान्वित करने और प्रभावी और कुशल प्रशासन चलाने के उद्देश्य से, जिला, तालुकों और गांवों का गठन आवश्यक है और इसीलिए जिला या अन्य इकाइयों को बनाने और फिर से बनाने की ऐसी शक्ति एक आवश्यक शक्ति है जो राज्य की समवर्ती सूची में सूचीबद्ध विषयों पर कानून बनाने की शक्ति के साथ अविभाज्य रूप से जुड़ी हुई है। यह शक्ति आवश्यक रूप से अनुच्छेद 154 में उल्लिखित कार्यकारी शक्ति के साथ अनुच्छेद 162 और अनुच्छेद 246 में उल्लिखित विधायी शक्ति के साथ राज्य और समवर्ती सूची की कई प्रविष्टियों के साथ पढ़ी जाती है। राज्य का राज्यपाल जिसके

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

पास कार्यकारी शक्ति है और जो सीधे या जिला, तालुक या गांव स्तर पर नियुक्त अपने अधीनस्थ अधिकारियों के माध्यम से इसका प्रयोग कर सकता है, अपनी कार्यकारी शक्तियों के प्रयोग में राज्य या समवर्ती सूची में प्रविष्टियों के संबंध में अपने कार्यकारी दायित्व को पूरा करने के उद्देश्य से जिला, तालुक या गांव का गठन या पुनर्गठन कर सकता है।

जिले का गठन या पुनर्गठन राज्य या समवर्ती सूची में विभिन्न प्रविष्टियों से संबंधित एक आकस्मिक या सहायक या सहायक शक्ति है, और प्रविष्टि 97, अवशिष्ट प्रावधान को उक्त विषय पर आकर्षित नहीं कहा जा सकता है।

93. मधुसूदन नायर (सुप्रा) के उपर्युक्त मामले में मिसौरी बनाम लुईस में संयुक्त राज्य अमेरिका के सुप्रीम कोर्ट के फैसले का भी हवाला दिया गया था और यह माना गया था कि अदालत के लिए उन मामलों में हस्तक्षेप करना मुश्किल था जो पूरी तरह से सरकार की कार्यकारी शक्तियों के भीतर हैं और जो पूरी तरह से प्रशासनिक मामले हैं जब तक कि शक्तियों का स्पष्ट दुरुपयोग न हो। मिसौरी बनाम लुईस (सुप्रा) से संबंधित उद्धरण इस प्रकार है:-

"5. ....प्रत्येक राज्य को नगरपालिका उद्देश्यों के लिए अपने क्षेत्र के राजनीतिक उपविभाग बनाने और उनकी स्थानीय सरकार को विनियमित करने का अधिकार है.....यदि आवश्यकता नहीं है तो सुविधा के लिए अक्सर ऐसा करना आवश्यक होता है, और यह किसी राज्य की अपने आंतरिक मामलों को विनियमित करने की शक्ति में गंभीर रूप से हस्तक्षेप करेगा, ताकि उसे यह अधिकार न दिया जा सके....."

94. याचिकाकर्ताओं द्वारा यह दावा करके संबंधित अधिसूचना को चुनौती देने का प्रयास किया गया कि यह भारतीय राजनीति के धर्मनिरपेक्ष लोकाचार के विपरीत है। इस संबंध में, अनुच्छेद 51-ए के तहत खंड (ई) पर भरोसा करने की मांग की गई, जो प्रत्येक नागरिक को धार्मिक, भाषाई और क्षेत्रीय या वर्गीय विविधताओं से परे भारत के सभी लोगों के बीच सद्भाव और समान भाईचारे की भावना को बढ़ावा देने का कर्तव्य देता है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

95. हम इस तथ्य पर ध्यान दे सकते हैं कि अनुच्छेद 51-ए संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 के तहत भाग IV के तहत डाला गया था, और इसके खंड (ई) के तहत प्रदान की गई धार्मिक, भाषाई और क्षेत्रीय या सांप्रदायिक विविधताओं से परे भारत के लोगों के बीच सद्भाव और भाईचारे की भावना को बढ़ावा देने के कर्तव्य के साथ, यह अनुच्छेद 51-ए के खंड (एफ) के तहत भारत के प्रत्येक नागरिक पर हमारी समग्र संस्कृति की समृद्ध विरासत को महत्व देने और संरक्षित करने का कर्तव्य भी बताता है। संविधान के तहत धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा और राष्ट्रीय पहचान में अंतर्निहित एक समग्र संस्कृति के विकास को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कई निर्णयों में देखा गया है।

96. एस.आर. बोम्मई एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य 36 में निम्नानुसार निर्णय दिया गया:-

> 25. भारत को विश्व का सबसे विविधतापूर्ण समाज कहा जा सकता है। यह एक समृद्ध विरासत वाला देश है। इस उपमहाद्वीप में अनेक जातियाँ एक साथ आई हैं। वे अपने साथ अपनी संस्कृतियाँ, भाषाएँ, धर्म और रीति-रिवाज़ लेकर आई हैं। इन विविधताओं ने अपनी समस्याएँ भी खड़ी कीं, लेकिन आरंभिक नेतृत्व ने समायोजन और सहिष्णुता के दर्शन का प्रचार करके उनसे निपटने में बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता दिखाई। यही वह संदेश है जो पुराने समय में संतों और सूफियों ने फैलाया और जिसकी वकालत महात्मा गांधी और आधुनिक समय के अन्य नेताओं ने राष्ट्रीय एकता और अखंडता को बनाए रखने के लिए की। धर्म के आधार पर अलग-अलग निर्वाचन क्षेत्रों द्वारा और भी अधिक उग्र रूप लेते हुए, फूट डालो और राज करो की ब्रिटिश नीति ने धर्म को राजनीति के साथ मिलाने का एक नया आयाम जोड़ा, जिसका मुकाबला करना आवश्यक था और जिसका मुकाबला तभी किया जा सकता था जब लोगों को राष्ट्रीय एकता और अखंडता की आवश्यकता का एहसास हो। धर्मनिरपेक्षता और अहिंसा के हथियारों के साथ ही महात्मा गांधी ने शक्तिशाली औपनिवेशिक शासकों के खिलाफ स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ी। 1908 में ही गांधीजी ने हिंद स्वराज में लिखा था:

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

Translated Version, Not for Legal Use.

"भारत एक राष्ट्र नहीं रह सकता, क्योंकि इसमें विभिन्न धर्मों के लोग रहते हैं। ... दुनिया के किसी भी हिस्से में एक राष्ट्रीयता और एक धर्म समानार्थी शब्द नहीं हैं; न ही भारत में ऐसा कभी हुआ है।"

गांधीजी को अलगाववादी ताकतों के खिलाफ भारत के लोगों को एकजुट करके स्वतंत्रता हासिल करने के लिए शांतिपूर्ण लड़ाई लड़ने के कार्य में पंडित जवाहरलाल नेहरू, मौलाना अबुल कलाम आज़ाद और अन्य नेताओं द्वारा सक्षम रूप से सहायता प्रदान की गई थी। 1945 में पंडित नेहरू ने लिखा:

"मुझे विश्वास है कि स्वतंत्र भारत की भावी सरकार इस अर्थ में धर्मनिरपेक्ष होनी चाहिए कि सरकार किसी भी धार्मिक विश्वास के साथ सीधे तौर पर खुद को नहीं जोड़ेगी, बल्कि सभी धार्मिक कार्यों को स्वतंत्रता देगी।"

और इसके बाद गांधीजी ने 1946 में हरिजन में लिखा:

"मैं अपने धर्म की कसम खाता हूँ। मैं इसके लिए मर सकता हूँ। लेकिन यह मेरा निजी मामला है। राज्य का इससे कोई लेना-देना नहीं है। राज्य आपके धर्मनिरपेक्ष कल्याण, स्वास्थ्य, संचार, विदेशी संबंध, मुद्रा इत्यादि का ध्यान रखेगा, लेकिन मेरे धर्म का नहीं। यह हर किसी की व्यक्तिगत चिंता है।"

x x x x x

182. राष्ट्र राज्य के निर्माण में समाज और संस्कृति का धर्मनिरपेक्षीकरण बढ़ाना शामिल है। धर्मनिरपेक्षता परंपरा से आधुनिकता की ओर जाने के लिए एक पुल के रूप में कार्य करती है। भारतीय राज्य ने अपनी ऐतिहासिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और बहु-धार्मिक विश्वासों के कारण सार्वभौमिक सहिष्णुता के लिए इस मार्ग को चुना। भारतीय संदर्भ में धर्मनिरपेक्षता सकारात्मक और पुष्टिपरक महत्व रखती है। आध्यात्मिक सहिष्णुता के लिए धर्मनिरपेक्ष लालसा वाले धर्म मानव इतिहास में उन धर्मों की तुलना में अधिक फले-फूले और लंबे समय तक जीवित रहे हैं, जिन्होंने अपनी खुद की एक गैर-मौजूद दुनिया में रहने का दावा किया था। इसलिए, सकारात्मक धर्मनिरपेक्षता धार्मिक विश्वास को मनुष्य के व्यक्तिगत और मानव जीवन के भौतिक,

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

लौकिक पहलुओं तक सीमित करती है। सकारात्मक धर्मनिरपेक्षता स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे के बुनियादी मूल्यों में विश्वास करती है। यह देश के इतिहास में वापस जाने या उसकी आध्यात्मिक या सांस्कृतिक पहचान में शरण लेने में विश्वास नहीं करती है, जो मनुष्य की अपने पूर्ण विकास की आवश्यकता को बाधित करती है। यह मुख्य रूप से राज्य और उसकी संस्था के इर्द-गिर्द घूमती है और इसलिए, प्रकृति में राजनीतिक है। साथ ही धर्म में अन्य सामाजिक-आर्थिक या सांस्कृतिक सामाजिक संरचना शामिल नहीं है। राज्य को सामाजिक शक्तियों की बुराइयों का प्रतिकार करने, आंतरिक शांति बनाए रखने और राष्ट्र को बाहरी आक्रमण से बचाने का काम सौंपा गया है। संविधान के तहत कल्याणकारी राज्य को अपने नागरिकों की भलाई के लिए साधन उपलब्ध कराने, अपने सभी लोगों को आवश्यक सेवाएँ और सुविधाएँ प्रदान करने का काम सौंपा गया है। सकारात्मक धर्मनिरपेक्षता के तहत नैतिकता मानव स्वतंत्रता या धर्मनिरपेक्ष जीवन के पक्ष में एक व्यापक शक्ति है। जैसा कि पहले कहा गया है, आधुनिक धर्मनिरपेक्षता के जनक प्रो. होलीओक ने कहा कि "नैतिकता व्यक्ति में मानव जाति की भलाई के लिए सम्मान पर आधारित होनी चाहिए, जिसमें ईश्वर या भविष्य के राज्य में विश्वास से निकाले गए सभी विचारों को शामिल न किया जाए।" उनके लिए नैतिकता मानव कर्तव्य की एक प्रणाली थी जो धर्म के मामले में ईश्वर से नहीं बल्कि मनुष्य से शुरू होती है। उन्होंने अपनी धर्मनिरपेक्षता को ईसाई धर्म से अलग किया, जो दुनिया के जीवित हित यानी दूसरे जीवन की संभावनाओं से जुड़ा है। सकारात्मक धर्मनिरपेक्षता नैतिकता के स्रोत के रूप में मनुष्य की जैविक और सामाजिक प्रकृति को जन्म देती है। सच्चे धर्म को एकीकरण के लिए एक गतिशील शक्ति के रूप में विकसित होना चाहिए जिसके बिना मानव जाति का निरंतर अस्तित्व अनिश्चित और अवास्तविक हो जाएगा। धर्मनिरपेक्षता सहिष्णुता की भावना, दृष्टिकोण की उदारता, एक-दूसरे के विश्वास के प्रति सम्मान और आत्म-अनुशासन के नियमों का पालन करने की इच्छा सिखाती है। यह दोनों के लिए होना चाहिए - एक व्यक्ति के रूप में और समूह के सदस्य के रूप में। धर्म और धर्मनिरपेक्षता अलग-अलग स्तरों पर काम करते हैं। धर्म व्यक्तिगत विश्वास और पूजा और प्रार्थना की पद्धति का मामला है, जो व्यक्ति के लिए व्यक्तिगत है जबकि धर्मनिरपेक्षता, जैसा कि पहले कहा गया है,

Translated Version: Not for Legal Use

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

विभिन्न धार्मिक विश्वासों को मानने वाले लोगों के साथ व्यवहार करने में राज्य की गतिविधि के लौकिक पहलू पर काम करती है। एक व्यक्ति अपने धार्मिक विश्वास में जितना अधिक समर्पित होगा, उसका हृदय उतना ही अधिक होना चाहिए, सहिष्णुता की भावना, धर्मनिरपेक्ष मार्ग का पालन। इसलिए, धर्मनिरपेक्षता धार्मिक भक्ति का विरोधी नहीं है। स्वामी विवेकानंद और महात्मा गांधी, हालांकि महानतम हिंदू थे, लेकिन उनकी शिक्षाएं और जीवन के उदाहरण हमें सभी लोगों की भलाई के लिए धर्म और धर्मनिरपेक्षता के मिश्रण का संदेश देते हैं। सच्चा धर्म दूसरे धर्मों को मानने वालों से नफरत करना नहीं सिखाता। कट्टरता धर्म नहीं है, न ही संकीर्णता को किसी व्यक्ति की अपने धर्म के प्रति वफादारी का सूचक माना जा सकता है। धर्मनिरपेक्षता दूसरे समुदाय के लोगों की पीड़ा के लिए एक-दूसरे की आवाज बंद करने पर विचार नहीं करती है और न ही यह उस समय चुप रहने की बात करती है जब उसका या दूसरे समुदाय के लोग जायज मांग करते हैं। यदि किसी भी समूह के लोगों को कठिनाई या पीड़ा का सामना करना पड़ता है, तो धर्मनिरपेक्षता हमेशा यह मांग करती है कि पीड़ितों की भावनाओं और पीड़ा के प्रति कभी भी असंवेदनशील और अलग न रहें। परीक्षा के समय लोगों ने धर्म से ऊपर उठकर पीड़ितों की रक्षा की। भारत में इस सांस्कृतिक विरासत ने यह आकार दिया है कि देश के विभिन्न भागों में रहने वाले सभी धार्मिक विश्वासों के लोगों को एक-दूसरे की धार्मिक आस्था या विश्वासों को सहन करना चाहिए और प्रत्येक धर्म ने समग्र भारतीय संस्कृति को एक सुखद मिश्रण या संश्लेषण के रूप में समृद्ध करने में अपना योगदान दिया है। हमारी धार्मिक सहिष्णुता हमारे संवैधानिक पंथ में परिलक्षित होती है।"

97. भारतीय संस्कृति की अंतर्निहित एकता राष्ट्रीय समग्र संस्कृति और जीवन शैली को बढ़ावा देती है, जिसका उल्लेख वलसम्मा पॉल (श्रीमती) बनाम कोचीन विश्वविद्यालय एवं अन्य 37 में निम्नलिखित शब्दों में किया गया है:-

"22. समानता और व्यक्ति की गरिमा पर आधारित समतावादी धर्मनिरपेक्ष सामाजिक व्यवस्था की स्थापना की दिशा में, अनुच्छेद 15(1) धर्म या जाति पहचान के आधार पर

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

भेदभाव को प्रतिबंधित करता है, ताकि राष्ट्रीय पहचान को बढ़ावा मिले, जो भारतीय संस्कृति की बहुलता को नकारता नहीं है, बल्कि इसे संरक्षित करता है। भारतीय संस्कृति विभिन्न स्रोतों से प्राप्त कई उपभेदों या तत्वों का उत्पाद या मिश्रण है, भले ही रूपों और प्रकारों की महत्वहीन विविधता हो। भारतीय संस्कृति में सदियों से आत्मा की एकता रही है। यह अंतर्निहित एकता ही भारतीय संस्कृति की सबसे उल्लेखनीय चिरस्थायी और स्थायी विशेषता है, जो विभिन्न लोगों के बीच विविधता में एकता को बढ़ावा देती है। इससे सौहार्दपूर्ण भावना और सहिष्णुता उत्पन्न होती है और उसे बढ़ावा मिलता है जिससे भारतीय परंपराओं की एकता और निरंतरता संभव होती है। इसलिए, सभी का प्रयास होगा कि ऐसी अनेक पहचानें विकसित की जाएं जो लगातार परस्पर क्रिया करती हों और ओवरलैप होती हों, और विभिन्न धार्मिक समुदायों, जातियों, वर्गों, उप-वर्गों और क्षेत्रों के सभी सदस्यों के लिए एक मिलन बिंदु साबित हों, जिससे जीवन और समाज के प्रति तर्कसंगत दृष्टिकोण को बढ़ावा मिले और एक राष्ट्रीय समग्र और महानगरीय संस्कृति और जीवन शैली की स्थापना हो।

23. अरुण शौरी ने अपनी पुस्तक रिलीजन इन पॉलिटिक्स, 1986 में पृष्ठ 332-33 पर इस प्रकार कहा है: "एक निष्पक्ष और दृढ़ राज्य का निर्माण करना; एक ऐसा राज्य और समाज जिसमें व्यक्ति ही सब कुछ हो, एक ऐसा व्यक्ति जिसके पास स्वायत्तता का एक अछूता क्षेत्र हो, जिसका न तो राज्य और न ही धर्म के नाम पर काम करने वाला कोई भी व्यक्ति या कोई अन्य समूह उल्लंघन कर सके; एक ऐसा राज्य और समाज जिसमें हम एक दूसरे को मनुष्य के रूप में देखना सीखें, जिसमें अपने साथियों को 'वे' और 'हम' के बीच विभाजित करने की आदत समाप्त हो जाए; एक ऐसा राज्य और समाज जिसमें ईश्वर का व्यक्ति बाहरी रूप से नहीं जाना जाता - उसके रूप से, उसके द्वारा किए जाने वाले अनुष्ठानों से, उसके द्वारा धारण किए गए धार्मिक पद से - बल्कि उसके द्वारा अपने साथियों के प्रति की जाने वाली सेवा से जाना जाता है; एक ऐसा राज्य और समाज जिसमें हम में से प्रत्येक अपनी सभी परंपराओं को हम सभी की साझी विरासत के रूप में पहचाने; एक ऐसा राज्य और समाज जिसमें हम धर्म की गंदगी को दूर करें और उस एकता और सत्य को समझें जिसकी सभी परंपराओं के

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

मनीषियों ने गवाही दी है; एक ऐसा राज्य और समाज जिसमें हम सीखें, जिसमें हम जांच करें, जिसमें हम अपने लिए सोचना शुरू करें - ऐसा राज्य और समाज बनाना उन लोगों के लिए एक योग्य कार्यक्रम है जो मानवतावाद और धर्मनिरपेक्षता की आकांक्षा रखते हैं। ऐसे कार्यक्रम के लिए अनिवार्य शर्त यह है कि हम सभी साधनों पर एक सीमा स्वीकार करें। हमें हर किसी के अपने मत और विश्वास के अधिकार को स्वीकार करना चाहिए और साथ ही हर किसी को दूसरों को अपने मत और विश्वास को अपनाने के लिए प्रभावित करने का अधिकार भी स्वीकार करना चाहिए, लेकिन साथ ही हममें से हर एक को यह शपथ लेनी चाहिए कि वह दूसरों को केवल अनुनय द्वारा प्रभावित करेगा या बिल्कुल भी प्रभावित नहीं करेगा। और मानवतावादी और धर्मनिरपेक्षतावादी की पहचान उनके द्वारा अपनाए जाने वाले आदर्शों और उनके अनुसरण के साधनों के संबंध में यह नहीं है कि 'मैं धर्मनिरपेक्ष रहूंगा, मैं मानवतावादी रहूंगा, केवल तभी जब सभी "अन्य" भी धर्मनिरपेक्ष और मानवतावादी के रूप में आचरण करेंगे।' हमारा आचरण सिद्धांतों पर आधारित होना चाहिए, चाहे दूसरों का आचरण कुछ भी हो। 'क्योंकि', जैसा कि यीशु ने कहा, 'यदि तुम उनसे प्रेम करते हो जो तुमसे प्रेम करते हैं, तो तुम्हारे लिए क्या पुरस्कार है?'

24. विवाह की विविध प्रथाओं, रीति-रिवाजों और परंपराओं को सामाजिक और राष्ट्रीय एकता और अखंडता तथा व्यक्तियों के बीच सद्भाव, सौहार्द और आत्म-सम्मान के लिए भारतीय संस्कृति की स्थापना के साधन के रूप में समेटने का दृष्टिकोण, अंतर-क्षेत्रीय से अंतर-जातीय, अंतर-संप्रदाय, अंतर-धार्मिक विवाहों को प्रोत्साहित करना है। इसलिए, उद्देश्यपूर्ण व्याख्या धर्मनिरपेक्षता और एक धर्मनिरपेक्ष राज्य की स्थापना का मार्ग प्रशस्त करेगी।

25. दोहराव की कीमत पर, यह कहा जाता है कि बहुलवाद भारतीय संस्कृति का मुख्य स्वर है और धार्मिक सहिष्णुता भारतीय धर्मनिरपेक्षता का आधार है। यह इस विश्वास पर आधारित है कि सभी धर्म पूर्णता या ईश्वर-प्राप्ति के लिए समान रूप से अच्छे और प्रभावकारी मार्ग हैं। यह एक जटिल व्याख्यात्मक प्रक्रिया का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें धर्म का उत्थान होता है और फिर भी कई धर्मों का एकीकरण होता है। यह एक

Translated Version: Not for Legal Use

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

बहु-धार्मिक समाज में धर्मों के बीच एक पुल है जो उनकी विविधता की बाधाओं को पार करता है। धर्मनिरपेक्षता संविधान की मूल विशेषता है जो राज्य की नीति और कार्रवाई के मार्गदर्शक सिद्धांत के रूप में है। सकारात्मक अर्थों में धर्मनिरपेक्षता एक समतावादी और दूरदर्शी समाज की आधारशिला है जिसे हमारा संविधान स्थापित करने का प्रयास करता है। यह बहु-धार्मिक और सामाजिक रूप से विघटित समाज में एक समान और टिकाऊ राष्ट्रीय पहचान का एकमात्र संभव आधार है। यह संघर्ष-समाधान और सामंजस्यपूर्ण और शांतिपूर्ण जीवन के लिए एक उपयोगी साधन है। यह सभी धर्मों के अनुयायियों को सुरक्षा की भावना प्रदान करता है और पूर्ण नागरिक स्वतंत्रता, संवैधानिक अधिकार और समान अवसर सुनिश्चित करता है।

98. संविधान के संदर्भ में और विशेष रूप से अनुच्छेद 51-ए में 'धर्मनिरपेक्षता' शब्द की व्याख्या सर्वोच्च न्यायालय ने सुश्री अरुणा रॉय एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य में निम्नलिखित शब्दों में की थी:-

“86. संविधान की प्रस्तावना में प्रयुक्त 'धर्मनिरपेक्षता' शब्द अनुच्छेद 25 से 30 में निहित प्रावधानों और संविधान में जोड़े गए भाग IV-A में परिलक्षित होता है, जिसमें नागरिकों के मौलिक कर्तव्यों को निर्धारित करने वाला अनुच्छेद 51-ए शामिल है। इसे संविधान के कामकाज के 50 से अधिक वर्षों के अनुभव के आधार पर समझना होगा। धर्म के प्रति पूर्ण तटस्थता और राज्य की संस्थाओं में सभी प्रकार की धार्मिक शिक्षाओं के प्रति उदासीनता ने विभिन्न धर्मों, आस्थाओं और विश्वासों के लोगों के वर्गों के बीच आपसी गलतफहमी और असहिष्णुता को दूर करने में मदद नहीं की है। इसलिए, "धर्मनिरपेक्षता" का सकारात्मक अर्थ है विभिन्न धर्मों के प्रति समझ और सम्मान विकसित करना। धर्मनिरपेक्षता का सार राज्य द्वारा धार्मिक मतभेदों के आधार पर लोगों के साथ भेदभाव न करना है। "धर्मनिरपेक्षता" का अभ्यास धर्मों के प्रति पूर्ण तटस्थ दृष्टिकोण अपनाकर या एक वर्ग के धार्मिक लोगों को दूसरे वर्ग के धर्म और आस्था को समझने और सम्मान करने के लिए प्रेरित करके सकारात्मक दृष्टिकोण से किया जा सकता है। इस तरह की आपसी समझ और एक-दूसरे की धार्मिक आस्था के प्रति

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

सम्मान के आधार पर, आपसी अविश्वास और असहिष्णुता को धीरे-धीरे समाप्त किया जा सकता है।

x x x x x x

88. गांधी की भाषा में धर्मनिरपेक्षता का वास्तविक अर्थ है सर्व धर्म समभाव, जिसका अर्थ है सभी धर्मों के लिए समान व्यवहार और सम्मान, लेकिन हमने धर्मनिरपेक्षता का अर्थ सर्व धर्म समभाव के रूप में गलत समझा है, जिसका अर्थ है सभी धर्मों का निषेध। इसका परिणाम यह हुआ है कि हम अपने छात्रों को अपनी धार्मिक पुस्तकों को छूने भी नहीं देते हैं। गांधीजी अपने जीवनकाल में धार्मिक और सांप्रदायिक सद्भाव बनाने का प्रयास करते रहे और ऐसा करने में उन्होंने अपना जीवन बलिदान कर दिया। उनके प्रबल अनुयायी विनोबा भावे ने स्वतंत्रता के बाद न केवल सभी भाषाओं को सीखा और भारत के सभी धर्मों का गहन अध्ययन किया, बल्कि अहिंसा और प्रेम के अपने संदेश का प्रसार करके भारतीयों के दिलों को एक करने के लिए पैदल ही भारत के कोने-कोने की यात्रा की। भारत के सभी धार्मिक ग्रंथों के अपने गहन अध्ययन के आधार पर, उन्होंने अपने जीवनकाल में ही उनका सार विभिन्न पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किया। उन्होंने बहुत दृढ़ता से सिफारिश की है कि विभिन्न धर्मों का सार, जिसे उन्होंने कुरान सार, खिस्त धर्म सार, भागवत धर्म सार, मनुष्यासन आदि पुस्तक रूपों में प्रकाशित किया है, छात्रों को पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से पेश किया जाना चाहिए क्योंकि ये धार्मिक पुस्तकें हजारों वर्षों से परखी हुई हैं और मनुष्य और मानव समाज के विकास के लिए उपयोगी साबित हुई हैं। धर्मनिरपेक्षता से जुड़े समाज में, "धर्मों का अध्ययन" धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा को उसकी सच्ची भावना में मजबूत करेगा। धर्मनिरपेक्षता के नाम पर, हमें ज्ञान के ऐसे महान खजाने से खुद को अलग नहीं रखना चाहिए जो ऋषियों, संतों और द्रष्टाओं द्वारा छोड़े गए हैं। बचपन से ही मौलिक मानवीय और आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा दिए बिना हम नैतिक चरित्र वाले सुसंस्कृत मनुष्य कैसे विकसित कर सकते हैं? (देखें विनोबा साहित्य, खंड 17, पृष्ठ 44-49 और 67।)

Translated Version: Not for Legal Use

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

99. संविधान (बयालीसवाँ संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा प्रस्तावना में पेश किया गया शब्द 'धर्मनिरपेक्षता' अनुच्छेद 25 से 30 और भाग IV-A में निहित प्रावधानों में भी परिलक्षित होता है, जिसमें नागरिकों के मौलिक कर्तव्यों को निर्धारित करने वाला अनुच्छेद 51-A शामिल है। डॉ. एम. इस्माइल फारुकी और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य 39 में यह इस प्रकार देखा गया:-

> "37. ..... धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा समानता के अधिकार का एक पहलू है, जो हमारे संविधान में योजना के पैटर्न को दर्शाने वाले कपड़े में केंद्रीय स्वर्णिम धागे के रूप में बुना गया है।"

100. अंग्रेजी इतिहासकार ई.पी. थॉम्पसन ने भारत के संदर्भ में लिखा है कि "दुनिया के सभी अभिसारी प्रभाव इस समाज से होकर गुजरते हैं.....ऐसा कोई विचार नहीं है जो पश्चिम या पूर्व में सोचा जा रहा हो, जो किसी भारतीय दिमाग में सक्रिय न हो"।

101. सदियों से एक समग्र संस्कृति के विकास का विषय कवि रघुपति सहाय (फिराक गोरखपुरी) के एक प्रसिद्ध दोहे में परिलक्षित होता है;

> "सरजमीं-ए-हिंद पर अक्वाम-ए-आलम के फिराक काफिले बस गए हिंदोस्तां बनता गया"।
>
> जिसका अर्थ है-
>
> "हिंद की धरती पर दुनिया के लोगों के कारवां आते रहे और हिंदोस्तां बनता रहा।"

102. उपर्युक्त पंक्तियों का उल्लेख **कैलास बनाम महाराष्ट्र राज्य40 और हिंसा विरोधी संघ बनाम मिर्जापुर मोती कुरैश जमात एवं अन्य41** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी किया गया है।

103. इस संदर्भ में **"भारत की खोज"** से संदर्भ लेना उचित होगा जहां पंडित जवाहरलाल नेहरू हमारे देश को एक “प्राचीन पालिम्प्सेस्ट” के रूप में वर्णित करते हैं, जिस पर विचार और कल्पना की परत-दर-परत अंकित की गई है, और फिर भी किसी भी बाद की परत ने पहले लिखी गई बातों को पूरी तरह से छिपाया या मिटाया नहीं है”।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

104. जैसा कि हमने इस निर्णय के पिछले भाग में उल्लेख किया है, **एस.आर. बोम्मई** (सुप्रा) के मामले में 'धर्मनिरपेक्षता' शब्द को एक सकारात्मक अवधारणा के रूप में समझा गया है, जिसमें यह माना गया है कि भारतीय संदर्भ में राज्य प्रगति और राष्ट्रीय अखंडता प्राप्त करने के लिए अपने लोगों के बीच विश्वास और आत्मविश्वास का माहौल सुनिश्चित करने के लिए एक संतुलन बनाता है। एक समग्र सांस्कृतिक विरासत के विकास पर भी जोर दिया गया है जिसने हमारे लोगों के जीवन को उनके धार्मिक विश्वास और मान्यताओं से परे आकार दिया है, जिससे एक मिश्रण या संश्लेषण के रूप में एक समग्र भारतीय संस्कृति का विकास हुआ है।

105. हम इस तथ्य पर भी ध्यान दे सकते हैं कि आज भारत में सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन सदियों के सांस्कृतिक लेन-देन और सामाजिक वार्ताओं का परिणाम है, जिसने पूरे उपमहाद्वीप को अपने में समाहित कर लिया है, जिसके परिणामस्वरूप एक सांस्कृतिक मोज़ेक का विकास हुआ है, जो राष्ट्रीय पहचान में अंतर्निहित एक समग्र संस्कृति की गतिशीलता को दर्शाता है। समकालीन भारतीय संस्कृति को संश्लेषण, आत्मसात और आत्मसात की एक सतत प्रक्रिया की अभिव्यक्ति के रूप में देखा जाता है।

106. हमारा विचार है कि याचिकाकर्ताओं द्वारा स्वयं रिकॉर्ड में रखे गए विभिन्न साहित्यिक और ऐतिहासिक ग्रंथों के उद्धरणों में गंगा और यमुना नदियों के संगम पर 'प्रयाग' के नाम से पहचाने जाने वाले स्थल का उल्लेख है, जो प्राचीन काल से संस्कृति और तीर्थयात्रा के प्रमुख केंद्र के रूप में जारी है और मध्यकालीन युग से लेकर हमारे समय तक जारी है। उक्त नाम से स्थल का उल्लेख विदेशी यात्रियों के यात्रा वृत्तांतों में भी किया गया है। हम इस तथ्य पर भी ध्यान दे सकते हैं कि ऐतिहासिक संदर्भों के अनुसार सदियों से चली आ रही परंपरा के रूप में गंगा और यमुना नदियों के संगम पर आयोजित होने वाला समागम, भारतीय संस्कृति के समग्र प्रतिबिंब के रूप में असंख्य सांस्कृतिक मोजेक का प्रतिनिधित्व करता है।

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

107. उपर्युक्त चर्चा के संदर्भ में देखा जाए तो राज्य सरकार द्वारा प्रस्तावित नाम परिवर्तन के कारणों को बताते हुए जो सामग्री हमारे समक्ष रखी गई है, उसे आधारहीन नहीं कहा जा सकता है, और यह स्पष्ट रूप से राज्य सरकार के नीतिगत निर्णय को दर्शाता है।

108. याचिकाकर्ता यह प्रदर्शित करने के लिए कोई भी सामग्री रिकॉर्ड पर नहीं रख पाए हैं कि राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में लिया गया निर्णय पूरी तरह से अनुचित, मनमाना और अप्रासंगिक विचारों पर आधारित है, या यह किसी भी संवैधानिक या वैधानिक प्रावधान का उल्लंघन करता है, ताकि इसे ऐसे मामलों में न्यायिक समीक्षा के सीमित दायरे के मापदंडों के भीतर लाया जा सके। रिकॉर्ड में ऐसा कुछ भी नहीं है जो यह प्रदर्शित करे कि नाम बदलने मात्र से व्यापक जनहित किस प्रकार प्रभावित होगा।

109. उपर्युक्त तथ्यों के परिप्रेक्ष्य में, हम इस मामले में हस्तक्षेप करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपने असाधारण अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने के लिए इच्छुक नहीं हैं। जनहित याचिका के रूप में दायर रिट याचिकाएँ, जो हमारे समक्ष हैं, योग्यता से रहित हैं और तदनुसार **खारिज** की जाती हैं।

110. हम यह देख सकते हैं कि इन याचिकाओं को खारिज करने को इस तरह से नहीं समझा जा सकता है कि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि हमने या तो संबंधित अधिसूचना का समर्थन किया है या नाम परिवर्तन के संबंध में राज्य सरकार के निर्णय के संबंध में कोई राय व्यक्त की है।

आदेश दिनांक: 26.02.2019

(न्यायमूर्ति डॉ. वाई.के. श्रीवास्तव) (मुख्य न्यायमूर्ति गोविंद माथुर)

Translated Version: Not for Legal Use.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।